SAPTHAGIRI (HINDI)
ILLUSTRATED MONTHLY
Volume:52, Issue: 4
September-2021, Price Rs.5/-.
No. of pages-56.

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

सप्तगिरि

सचित्र मासिक पत्रिका

सितंबर-2021 रु.5/-

नमस्ते देवदेवेश
वराहवदनाऽच्युत।
क्षीरसागरसंकाश
वज्रशृंग महाभुज॥

०७-१०-२०२१
गुरुवार
दिन - ध्वजारोहण
रात - महाशेषवाहन

०८-१०-२०२१
शुक्रवार
दिन - लघुशेषवाहन
रात - हंसवाहन

०९-१०-२०२१
शनिवार
दिन - सिंहवाहन
रात - मोतीवितानवाहन

१०-१०-२०२१
रविवार
दिन - कल्पवृक्षवाहन
रात - सर्वभूपालवाहन

११-१०-२०२१
सोमवार
दिन - पालकी में मोहिनी अवतारोत्सव
रात - गरुडवाहन

१२-१०-२०२१
मंगलवार
दिन - हनुमद्वाहन
रात - गजवाहन

१३-१०-२०२१
बुधवार
दिन - सूर्यप्रभावाहन
रात - चंद्रप्रभावाहन

१४-१०-२०२१
गुरुवार
दिन - रथ-यात्रा
रात - अश्ववाहन

१५-१०-२०२१
शुक्रवार
दिन - चक्रस्नान
रात - ध्वजावरोहण

यो‍त्स्यमानानवेक्षेऽहं य एतेऽत्र समागताः।
धार्तराष्ट्रस्य दुर्बुद्धेर्युद्धे प्रियचिकीर्षवः ॥२३॥

(- श्रीमद्भगवद्गीता १-२३)

दुर्बुद्धि दुर्योधन का युद्ध में हित चाहनेवाले जो-जो ये राजालोग इस सेना में आये हैं, इन युद्ध करनेवालों को मैं देखूँगा।

शोक पङ्क निमग्नं यः सांख्ययोगोपदेशतः।
उज्झहारार्जुनं भक्तं स कृष्णः शरणं मम॥

(- गीता मकरंद, गीताचार्य स्तोत्र)

दुःख रूपी दल-दल में धंसे अर्जुन का जिसने अपने ज्ञानोपदेश से उद्धार किया वह भगवान श्रीकृष्ण ही मेरे लिए शरण्य हैं।

तिरुपति एवं उसके आसपास के दर्शनीय क्षेत्र

श्री गोविंदराज स्वामी मंदिर : आंध्रप्रदेश के चित्तूर जिले में तिरुमल पर्वत के पदभाग में तिरुपति स्थित है। वैष्णवधर्म के प्रवर्तक श्री रामानुज से संबंध रखनेवाला यह पुरातन शहर है। ११३० ए.डि. में प्रख्यात वैष्णवधर्म के प्रवर्तक श्री रामानुज ने श्री गोविंदराज स्वामी मंदिर का निर्माण कर, परिसर के छोटे प्रांत को आवास योग्य बनाकर, उसे 'तिरुपति' का नाम रखा। पुराणों के अनुसार, यहाँ के मूर्ति की वैष्णव सम्प्रदाय के प्रवर्तक एवं महान आचार्य श्री रामानुज ने प्रतिष्ठा की। भगवान तो शयन मुद्रा में है। इस प्रांगण में श्री आण्डाल, श्री पार्थसारथी एवं श्री वेंकटेश्वरस्वामी के मंदिर हैं।

श्री कोदंडराम स्वामी मंदिर : तिरुपति रेल्वेस्टेशन से एक कि.मी. दूरी पर श्रीराम का मंदिर है। लंका से वापस आते वक्त सीता लक्ष्मण सहित श्रीराम के तिरुपति आगमन के स्मरण में इस मंदिर का निर्माण किया गया है। शिलालेख के आधार से १५वीं शताब्दी में सालुव नरसिंह का अभ्युदय के लिए नरसिंह मोदलियार नामक व्यक्ति ने इस मंदिर का निर्माण किया।

श्री कपिलेश्वर स्वामी मंदिर : तिरुपति से तीन कि.मी. दूरी पर भगवान शिव का मंदिर है। कपिल महर्षि द्वारा प्रतिष्ठापित होने के कारण भगवान को कपिलेश्वर और तीर्थ को कपिलतीर्थम् का नाम प्रचलित हो गया है।

अलमेलुमंगापुरम् (तिरुचानूर) : तिरुपति से ५ किलोमीटर दूरी पर यह मंदिर स्थित है। श्री वेंकटेश्वरस्वामी की पत्नी श्री पद्मावती देवी का मंदिर है। कहा जाता है कि तिरुचानूर में विराजमान श्री पद्मावती देवी के दर्शन के बाद ही तिरुमल-यात्रा की सफलता प्राप्त होगी। श्री पद्मावती देवी मंदिर की पुष्करिणी को 'पद्मसरोवर' कहा जाता है। पुराणों के अनुसार भगवती देवी ने इस पुष्करिणी के स्वर्णपद्म में स्वयं अवतार लिया है।

श्रीनिवासमंगापुरम् : तिरुपति से १२ किलोमीटर दूरी पर यह मंदिर स्थित है। ग्राम की आग्नेय दिशा में श्री कल्याण वेंकटेश्वरस्वामी का मंदिर है। पुराणों में कहा गया है कि श्री वेंकटेश्वरस्वामी ने श्री पद्मावती देवी से विवाह करने के बाद तिरुमल जाने के पूर्व कुछ समय तक इस क्षेत्र में ठहरे। १६वीं सती में ताल्लपाक चिन्न तिरुवेंगडनाथ ने इस मंदिर का जीर्णोद्धारण किया।

नारायणवनम् : तिरुपति से लगभग २२ किलोमीटर की दूरी पर आग्नेय दिशा में स्थित मंदिर में श्री कल्याण वेंकटेश्वरस्वामी विराजमान है। इसी पवित्र क्षेत्र में आकाशराजा की पुत्री श्री पद्मावती देवी एवं श्री वेंकटेश्वरस्वामी का विवाह सम्पन्न हुआ था। इस महान घटना की याद में आकाशराजा ने इस मंदिर का निर्माण करवाया।

नागलापुरम् : इस मंदिर में श्री वेदनारायण स्वामी विराजमान हैं। तिरुपति से लगभग ६५ कि.मी. दूरी पर आग्नेय दिशा में यह मंदिर स्थित है। विजयनगर शैली को प्रतिबिंबित करनेवाली यह सुन्दर नमूना है। गर्भगृह में दोनों ओर श्रीदेवी व भूदेवी सहित मत्स्यावतार रूपी श्री विष्णु की मूर्ति विराजमान हैं। मंदिर की विशिष्टता का प्रमुख कारण है, सूर्याराधना। हर वर्ष मार्च महीने में सूर्य की किरणे तीन दिन तक गोपुर से होती हुई गर्भगृह में स्थित मूर्ति को स्पर्श करती हैं। इसे सूर्य द्वारा भगवान की आराधना मानी जाती है। विजयनगर सम्राट श्रीकृष्णदेवराय ने अपनी माता के अनुरोध पर इस मंदिर का निर्माण कराया।

अप्पलायगुंटा : अप्पलायगुंटा में श्री प्रसन्नवेंकटेश्वरस्वामी का मंदिर है। तिरुपति से १५ कि.मी. दूरी पर स्थित है। ब्रह्मोत्सव तथा प्लवोत्सव आदि को बडे पैमाने पर मनाया जाता है। इस प्राचीन मंदिर में श्री पद्मावती देवी एवं आंडाल की मूर्तियाँ विराजमान हैं। कार्वेटिनगरम् के राजाओं से निर्मित इस मंदिर के सामने श्री आंजनेय स्वामी की मूर्ति है। दीर्घकालीन व्याधियों के निवारण के लिए यहाँ विराजमान श्री आंजनेय स्वामी की भक्तों द्वारा पूजार्चना की जाती है।

कार्वेटिनगरम् : तिरुपति से ५८ कि.मी. दूरी पर पुत्तूर के निकट यह मंदिर स्थित है। रुक्मिणी, सत्यभामा सहित श्री वेणुगोपाल स्वामी के दर्शन कर सकते हैं। प्राचीन काल में नारायणवनम् के राजाओं ने इसका निर्वहण किया। हनुमत्समेत श्री सीताराम व लक्ष्मण की एकशिला मूर्ति इस मंदिर में विराजमान हैं।

सप्तगिरि

तिरुमल तिरुपति देवस्थान की सचित्र मासिक पत्रिका

वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन।
वेङ्कटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति॥

वर्ष-५२ सितंबर-२०२१ अंक-०४

गौरव संपादक
डॉ.के.एस.जवहर रेड्डी, आई.ए.एस.,
कार्यनिर्वहणाधिकारी, ति.ति.दे.

प्रधान संपादक
डॉ.के.राधारमण

संपादक
डॉ.वी.जी.चोक्कलिंगम

उपसंपादक
श्रीमती एन.मनोरमा

मुद्रक
श्री पी.रामराजु
विशेष अधिकारी,
(प्रचुरण व मुद्रणालय),
ति.ति.दे. मुद्रणालय, तिरुपति।

स्थिरचित्र
श्री पी.एन.शेखर, छायाचित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।
श्री बी.वेंकटरमण, सहायक चित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

जीवन चंदा .. रु.500-00
वार्षिक चंदा .. रु.60-00
एक प्रति .. रु.05-00
विदेशी वार्षिक चंदा .. रु.850-00

अन्य विवरण के लिए:
CHIEF EDITOR, SAPTHAGIRI, TIRUPATI - 517 507.
Ph.0877-2264543, 2264359, Editor - 2264360.

विषयसूची

भगवान विष्णु का वराह अवतार	श्री ज्योतिन्द्र के.अजवालिया	07
जय गणेश!	श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण	11
वामन जयंती	श्रीमती प्रीति ज्योतिन्द्र अजवालिया	14
तिरुपति श्रीवेङ्कटेश्वर (तिरुपति बालाजी)	प्रो.यद्दनपूडि वेङ्कटरमण राव प्रो.गोपाल शर्मा	18
अनंत पद्मनाभ व्रत	डॉ.जी.सुजाता	21
शरणागति मीमांसा	श्री कमलकिशोर हि. तापडिया	23
श्री रामानुज नूट्रन्दादि	श्री श्रीराम मालपाणी	25
अलौकिक समारोह	डॉ.विजयप्रकाश त्रिपाठी	31
श्री प्रपन्नामृतम्	श्री रघुनाथदास रान्दड	32
मन का मर्म	श्रीमती एस.पी.वरलक्ष्मी	34
हरिदास वाङ्मय में श्रीवेंकटाचलाधीश	डॉ.एम.आर.राजेश्वरी	36
मंगलाशासन पाशुरम्	श्री के.रामनाथन	39
श्रीमद्भगवद्गीता	कुमारी जे.दिव्यश्री	41
अर्थ पंचक	श्रीमती शिल्पा केशव रांदड	42
वेदों के बारे में	श्री वेमुनूरि राजमौलि	45
अपार औषध गुणों से युक्त बबूल	डॉ.एस.हरि	47
आइये, संस्कृत सीखेंगे...!!	डॉ.सी.आदिलक्ष्मी	49
नीतिकथा - गुरूजी की भेंट	श्री सुधाकर रेड्डी	50
चित्रकथा - वामन अवतार	डॉ.एम.रजनी	52
क्विज	डॉ.एन.प्रत्यूषा	54

website: www.tirumala.org or www.tirupati.org वेबसैट के द्वारा सप्तगिरि पढ़ने की सुविधा पाठकों को दी जाती है। सूचना, सुझाव, शिकायतों के लिए - sapthagiri.helpdesk@tirumala.org

मुखचित्र - श्री वराहस्वामी, तिरुमल।
चौथा कवर पृष्ठ - श्री पद्मावती देवी, तिरुचानूर।

सूचना

मुद्रित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखक के हैं। उनके लिए हम जिम्मेदार नहीं हैं।

- प्रधान संपादक

वेद वांग्यम ही हिन्दू धर्म है

'वेद' ही हिन्दू धर्म के सर्वोच्च और सर्वोपरि धर्मग्रन्थ हैं। सामान्य भाषा में वेद का अर्थ है 'ज्ञन'। वेद सर्वज्ञानमय है। इस जगत, इस जीवन एवं परमपिता परमेश्वर, इन सभी का वास्तविक ज्ञान 'वेद' है। वस्तुतः ज्ञान वह प्रकाश है जो मनुष्य मन के अज्ञान रूपी अंधकार को नष्ट कर देता है। वेदों को इतिहास का ऐसा स्रोत कहा गया है जो पौराणिक ज्ञान-विज्ञान का अखंड भाण्डागार है। वेद भारतीय संस्कृति के वे ग्रन्थ हैं, जिनमें ज्योतिष, गणित, विज्ञान, धर्म, ओषधि, प्रकृति, खगोल शास्त्र, नाट्य, संगीत आदि लग-भाग सभी विषयों से संबंधित ज्ञान का भंडार भरा पड़ा है। वेद हमारी भारतीय संस्कृति की 'रीढ़' हैं। इन वेदों में हजारों मन्त्र और रचनाएँ हैं जो एक ही समय में संभवतः नहीं रची गयी होंगी और न ही एक ऋषि द्वारा। इनकी रचना समय-समय पर ऋषियों द्वारा होती रही और वे एकत्रित होते गए। एक ऐसी भी मान्यता है कि- इनके मंत्रों को परमेश्वर ने प्राचीन ऋषियों को अप्रत्यक्ष रूप से सुनाया था। इसलिए वेदों को 'श्रुति' भी कहा जाता है। 'कृष्णद्वैपायन वेदव्यास' ने वेदों को चार भागों में विभाजित किया। इस प्रकार हर वेद का एक उपवेद भी हैं। ऋग्वेद-आयुर्वेद; यजुर्वेद-धनुर्वेद; सामवेद का गंधर्ववेद और अथर्वण वेद का अर्थ शास्त्र। श्रुति, स्मृति, उपनिषद, पुराण, इतिहासों से वेदों का सार को ग्रहण कर सकते हैं।

वेद में एक ही ईश्वर की उपासना का विधान है और एक ही धर्म - 'मानव धर्म' का संदेश है। वेद मनुष्यों को मानवता, समानता, मित्रता, उदारता, प्रेम, परस्पर-सौहार्द्र, अहिंसा, सत्य, संतोष, अस्तेय, अपरिग्रह, बह्मचर्य, आचार-विचार व्यवहार में पवित्रता, खान-पान में शुद्धता और जीवन में तप-त्याग-परिश्रम की व्यापकता का उपदेश देता है।

'रामायण वेद समम्' - रामायण में कहा गया है कि 'रामायण' वेदों के समान है। 'महाभारत' को 'पंचमवेद' माना जाता है। हमारे वर्तमान जीवन में घटने वाली एक ही कहानी और घटना भारत में मिलती है। हम ऐसी कहानी नहीं देखते जो भारत में नहीं है। युवा पीढ़ियों की दृष्टि में वेदों की महत्वता नहीं बची है। क्योंकि हमने कभी जानने की कोशिश नहीं की कि वेद हैं क्या?

हम हमेशा यह सोचते हैं कि यह वेद पुराण केवल अध्यात्म पथ पर चलने वाले ऋषि-मुनि और संतों के लिए है लेकिन यह सच नहीं है वेद हर मानव के लिए हैं और हर मानव के जीवन के लिए हैं। चाहे वह अध्यात्म पथ पर चलना चाहता हो या जो चाहे वह भौतिक जगत के पथ पर चलना चाहता है। उसके लिए वेद का ज्ञान बहुत जरूरी है। वेद का ज्ञान हमारे अंदर ज्ञान का प्रकाश फैला देता है उस प्रकाश में हम असत्य को पहचान सकते हैं झूठ को महसूस कर सकते हैं और आनेवाले वक्त को परख सकते हैं और उसके लिए सजग होकर तैयारी कर सकते हैं। वेद संसार के सभी रहस्यों की कुंजी है।

हमारे देश 'वेद भूमि' है। वेदमंत्रों से लेकर लोक-साहित्य तक सनातन संस्कृति एवं धर्म की व्यापकता दिखाती है। इतना महिमान्वित वेद शास्त्र को आगे पीढियों को देने केलिए हम सभी योगदान कर लेंगे।

भगवान विष्णु का वराह अवतार

- श्री ज्योतिन्द्र के.अजवालिया
मोबाइल - ९८२५११३६३६

भगवान विष्णु के वराह अवतार ने दैत्य हिरण्याक्ष से बचाया था पृथ्वी को। हिंदू धर्म ग्रंथों में भागवत पुराण, विष्णु पुराण और वराह पुराण के अनुसार, भाद्रपद मास के शुक्ल पक्ष की तृतीया तिथि को वराह जयंती का पर्व मनाया जाता है। भगवान विष्णु ने इस दिन वराह अवतार लेकर हिरण्याक्ष नामक दैत्य का वध किया था।

भगवान विष्णु ने वराह अवतार क्यों लिया?

इस अवतार में भगवान विष्णु ने शरीर मानवीय लिया था, जबकि उनकी मुख पशु-वराह के समान था। इसीलिए इस अवतार को 'वराह अवतार' कहा गया। प्रचीन शास्त्रों में यह कहा गया हैं कि विष्णुजी ने यह अवतार दैत्य हिरण्याक्ष का वध करने के लिए लिया था। वराहावतार भगवान विष्णु के २४ अवतारों में से १६वें अवतार हैं। जब-जब धरती पापी लोगों से कष्ट पाती है तब-तब भगवान विविध रूप धारण कर इसके दुःख दूर करते हैं। राक्षस हिरण्याक्ष ने जब पृथ्वी को जल में डुबो दिया था तब भगवान विष्णु वराह अवतार लेकर पृथ्वी (वाराही) का कल्याण किया था। इनकी शक्ति अथवा पत्नी देवी वाराही हैं। भगवान वराह का निवास स्थान वैकुंठ है।

वराह मंत्र

ॐ वराहाय नमः,

ॐ धृतसूकररूपकेशवाय नमः।

ॐ नमः श्री वराहाय धरण्युद्धारणाय स्वाहाः (स्कन्द पुराण)

वराह भगवान का अस्त्र सुदर्शन चक्र है। उनकी जीवन संगीनी वाराही (पृथ्वी देवी) है।

वराह भगवान की कथा - शास्त्र भागवत पुराण, विष्णु पुराण, वराह पुराण में वर्णित है। वराह चरित्र का अनुसंधान करने से पहले दैत्य हिरण्याक्ष के चरित्र में दृष्टिपात करें।

हिरण्याक्ष का जन्म चरित्र

एक बार मरीचि, नन्दन, कश्यप जी ने भगवान को प्रसन्न करने के लिये खीर की आहुति दिया और उनकी आराधना समाप्त करके सन्ध्या काल के समय अग्निशाला में ध्यानस्थ होकर बैठे गये। उसी समय दक्ष प्रजापति की पुत्री दिति (यह कश्यप की पत्नी तथा दैत्यों की माता हैं।) कामातुर होकर पुत्र प्राप्ति की लालसा से कश्यप जी के निकट गई। दिति ने कश्यप जी से मीठे वचनों से अपने साथ रमण करने के लिये प्रार्थना किया। इस पर कश्यप जी ने कहा, ''हे प्रिये! मैं तुम्हें तुम्हारी इच्छानुसार तेजस्वी पुत्र अवश्य दूँगा। किन्तु तुम्हें एक प्रहर के लिये प्रतीक्षा करनी होगी। सन्ध्याकाल में सूर्यास्त के पश्चात् भूतनाथ भगवान शंकर अपने भूत, प्रेत तथा यक्षों को लेकर बैल पर चढ़ कर विचरते हैं। इस समय तुम्हें कामक्रीड़ा में रत देख कर वे अप्रसन्न हो जावेंगे। अतः यह समय सन्तानोत्पत्ति के लिये उचित नहीं है। सारा संसार मेरी निन्दा करेगा। यह समय तो सन्ध्यावन्दन और भगवत् पूजन आदि के लिये ही है। इस समय जो पिशाचों जैसा आचरण करते हैं वे नरकगामी होते हैं।''

पति के इस प्रकार समझाने पर भी उसे कुछ भी समझ में न आया और उस कामातुर दिति ने निर्लज्ज भाव से कश्यप जी के हाथ पकड़ लिया। इस पर कश्यप जी ने दैव इच्छा को प्रबल समझ कर दैव को नमस्कार किया और दिति की इच्छा पूर्ण की और उसके बाद शुद्ध जल से स्नान कर के सनातन ब्रह्म रूप गायत्री का जप करने लगे। दिति ने गर्भ धारण कर के कश्यप जी से प्रार्थना की, ''हे आर्यपुत्र! भगवान भूतनाथ मेरे अपराध को क्षमा करें और मेरा यह गर्भ नष्ट न करें। उनका स्वभाव बड़ा उग्र है। किन्तु वे अपने भक्तों की सदा रक्षा करते हैं। वे मेरे बहनोई हैं मैं उन्हें नमस्कार करती हूँ।''

कश्यप जब सन्ध्यावन्दन आदि से निवृत हुये तो उन्होंने अपनी पत्नी को अपनी सन्तान के हित के लिये प्रार्थना करते हुये और थर-थर काँपती हुई देखा तो वे बोले, ''हे दिति! तुमने मेरी बात नहीं मानी। तुम्हारा चित्त

काम वासना में लिप्त था। तुमने असमय में भोग किया है। तुम्हारे कोख से महा भयंकर अमंगलकारी दो अधम पुत्र उत्पन्न होंगे। सम्पूर्ण लोकों के निरपराध प्राणियों को अपने अत्याचारों से कष्ट देंगे। धर्म का नाश करेंगे। साधू और स्त्रियों को सतायेंगे। उनके पापों का घड़ा भर जाने पर भगवान कुपित हो कर उनका वध करेंगे।''

दिति ने कहा, ''हे भगवान! मेरी भी यही इच्छा है कि मेरे पुत्रों का वध भगवान के हाथ से ही हो। ब्राह्मण के शाप से न हो क्योंकि ब्राह्मण के शाप के द्वारा प्राणी नरक में जाकर जन्म धारण करता है।'' तब कश्यप जी बोले, ''हे देवी! तुम्हें अपने कर्म का अति पश्चाताप है इसलिये तुम्हारा नाती भगवान का बहुत बड़ा भक्त होगा और तुम्हारे यश को उज्वल करेगा। वह बालक साधुजनों की सेवा करेगा और काल को जीत कर भगवान का पार्षद बनेगा।''

कश्यप जी के मुख से भगवद्भक्त पौत्र के उत्पन्न होने की बात सुन कर दिति को अति प्रसन्नता हुई और अपने पुत्रों का वध साक्षात् भगवान से सुन कर उस का सारा खेद समाप्त हो गया।

उसके दो पुत्र हिरण्याक्ष तथा हिरण्यकश्यपु का जन्म हुआ और विधि के विधानों के हिसाब से ये दुष्टता की राह पर चल पड़े। ये तथा इनके वंश राक्षस कहलाए परंतु प्रभु की इच्छा से इनके कुल में प्रह्लाद और बलि जैसे महापुरुषों का जन्म भी हुआ।

जय-विजय को शाप और हिरण्याक्ष-हिरण्यकशिपु का जन्म

एक बार सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार (ये चारों सनकादि ऋषि कहलाते हैं और देवताओं के पूर्वज माने जाते हैं) सम्पूर्ण लोकों से विरक्त होकर चित्त की शान्ति के लिये भगवान विष्णु के दर्शन करने हेतु उनके वैकुण्ठ लोक में गये। वैकुण्ठ के द्वार पर जय और विजय नाम के दो द्वारपाल पहरा दिया करते थे। जय और विजय ने इन सनकादिक ऋषियों को द्वार पर ही रोक लिया और वैकुण्ठ लोक के भीतर जाने से मना करने लगे। तब चारों सनकादि ऋषि ने जय-विजय को शाप दिया, शाप वश ये जय-विजय ने हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपु के रूप में अवतार लिया।

हिरण्याक्ष वध

जय और विजय वैकुण्ठ से गिर कर दिति के गर्भ में आ गये। कुछ काल के पश्चात् दिति के गर्भ से दो पुत्र उत्पन्न हुये। जिनका नाम प्रजापति कश्यप ने हिरण्यकश्यपु और हिरण्याक्ष रखा। इन दोनों यमल के उत्पन्न होने के समय तीनों लोकों में अनेक प्रकार के भयंकर उत्पात होने लगे। स्वर्ग, पृथ्वी, आकाश सभी काँपने लगे और भयंकर आँधियाँ चलने लगीं। सूर्य और चन्द्र पर केतु और राहु बार-बार बैठने लगे। उल्कापात होने लगे। बिजलियाँ गिरने लगीं। नदियों तथा जलशयों के जल सूख गये। गायों के स्तनों से रक्त बहने लगा। उल्लू, सियार आदि रोने लगे।

दोनों दैत्य जन्मते ही आकाश तक बढ़ गये। उनका शरीर फौलाद के समान पर्वताकार हो गया। वे स्वर्ण के कवच, कुण्डल, कर्द्धनी, बाजूबन्द आदि पहने हुये थे। हिरण्यकश्यपु ने तप करके ब्रह्माजी को प्रसन्न कर लिया। ब्रह्माजी से उसने वरदान ले लिया कि उसकी मृत्यु न दिन में हो न रात में, न घर के भीतर हो न बाहर। इस तरह से अभय हो कर और तीनों लोकों पर विजय प्राप्त कर के वह एक छत्र राज्य करने लगा। उसका छोटा भाई हिरण्याक्ष उसकी आज्ञा का पलन करते हुये शत्रुओं का नाश करने लगा। एक दिन घूमते घूमते वह वरुण की पुरी में जा पहुँचा। पाताल लोक में पहुँच कर हिरण्याक्ष ने वरुण देव से युद्ध की याचना

करते हुये कहा, ''हे वरुण देव! आपने जगत के सम्पूर्ण दैत्यों तथा दानवों पर विजय प्राप्त किया है। मैं आपसे युद्ध की भिक्षा माँगता हूँ। आप मुझ से युद्ध करके अपने युद्ध कौशल का प्रमाण दें। उस दैत्य की बात सुन कर वरुण देव को क्रोध तो बहुत आया पर समय को देखते हुये उन्होंने हँसते हुये कहा, ''अरे भाई! अब लड़ने का चाव नहीं रहा है और तुम जैसे बलशाली वीर से लड़ने के योग्य अब हम रह भी नहीं गये हैं। तुम को तो यज्ञपुरुष नारायण के पास जाना चाहिये। वे ही तुमसे लड़ने योग्य हैं।

वरुण देव की बात सुनकर उस दैत्य ने देवर्षि नारद के पास जाकर नारायण का पता पूछा। देवर्षि नारद ने उसे बताया कि नारायण इस समय वराह का रूप धारण कर पृथ्वी को रसातल से निकालने के लिये गये हैं। इस पर हिरण्याक्ष रसातल में पहुँच गया। वहाँ उसने भगवान वराह को अपने दाढ़ पर रख कर पृथ्वी को लाते हुये देखा। उस महाबलि दैत्य ने वराह भगवान से कहा, ''अरे जंगली पशु! तू जल में कहाँ से आ गया है? मूर्ख पशु! तू इस पृथ्वी को कहाँ लिये जा रहा है? इसे तो ब्रह्माजी ने हमें दे दिया है। रे अधम! तू मेरे रहते इस पृथ्वी को रसातल से नहीं ले जा सकता। तू दैत्य और दानवों का शत्रु है इसलिये आज मैं तेरा वध कर डालूँगा।''

हिरण्याक्ष के इन वचनों को सुन कर वराह भगवान को बहुत क्रोध आया किन्तु पृथ्वी को वहाँ छोड़ कर युद्ध करना उन्होंने उचित नहीं समझा और उनके कटु वचनों को सहन करते हुये वे गजराज के समान शीघ्र ही जल के बाहर आ गये। उनका पीछा करते हुये हिरण्याक्ष भी बाहर आया और कहने लगा, ''रे कायर! तुझे भागने में लज्जा नहीं आती? आकर मुझसे युद्ध कर।'' पृथ्वी को जल पर उचित स्थान पर रखकर और अपना उचित आधार प्रदान कर भगवान वराह दैत्य की ओर मुड़े और कहा, ''अरे ग्राम सिंह (कुत्ते)! हम तो जंगली पशु हैं और तुम जैसे ग्राम सिंहों को ही ढूँढते रहते हैं। अब तेरी मृत्यु सिर पर नाच रही है।'' उनके इन व्यंग वचनों को सुनकर हिरण्याक्ष उन पर झपट पड़ा। भगवान वराह और हिरण्याक्ष में मध्य भयंकर युद्ध हुआ और अन्त में हिरण्याक्ष का भगवान वराह के हाथों वध हो गया।

भगवान वराह के विजय प्राप्त करते ही ब्रह्माजी सहित समस्त देवतागण आकाश से पुष्प वर्षा कर उनकी स्तुति करने लगे।

भागवत पुराण के अनुसार वराह कथा

ब्रह्म ने मनु और सतरूपा का निर्माण किया और सृष्टि करने की आज्ञा दी। इसके लिये भूमि की आवश्यकता होती है जिसे हिरण्याक्ष नामक दैत्य लेकर सागर के भीतर भूदेवी को अपना तकिया बना कर सोया था तथा देवताओं के डर से विष्ठा का घेरा बना रखा था।

मनु सतरूपा को जल ही जल दिखा जिसके बारे में ब्रह्म को बताया तब ब्रह्म ने सोचा कि सभी देव तो विष्ठा के पास तक नहीं जाते, एक शूकर ही है जो विष्ठा के समीप जा सकता है। भगवान विष्णु का ध्यान किया और अपने नासिका से वराह नारायण को जन्म दिया, पृथ्वी को ऊपर लाने की आज्ञा दी।

वराह भगवान समुद्र में उतरे और हिरण्याक्ष का संहार कर भूदेवी को मुक्त किया। श्रीहरि के वराह अवतार को कोटी कोटी वंदन।

जय गणेश!

- श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण, मोबाइल - ९४४०३०६२१३.

वक्रतुन्ड महाकाय सूयकोटिसमप्रभ

निर्विघ्नम् कुरुमे देव, सर्व कार्येषु सर्वदा।।

हर कोई, जो अपने किसी कार्य का आरंभ(श्रीगणेश) करने लगेगा, इसी प्रार्थना से पूजा का आरंभ करेगा। इस श्लोक में मंत्रित महानुभाव की अनुकंपा का वह आग्रह करेगा।

हिन्दू धर्म की उपासना के कर्म में प्रथम पूजित देवता है गणेश जी महराज! प्रमुख सभी देवताओं ने मिल कर गणेश जी को यह आस्था व दर्जा दिया था। तभी तो समस्त कार्यों के आरंभ में की जाने वाली पूजाओं में गणेश जी महराज का स्तोत्र कर, उसे सर्व प्रथम आह्वानित करने के उपरांत शिवजी, विष्णुभगवान या ब्रह्म का आवाहन किया जाता है।

इस आचरण के पीछे एक रोचक कहानी है! -

पार्वती महादेवी का स्नान

कैलाश पति शंकर भगवान लोक कंटक त्रिपुरासुरों से युद्ध करने चला गया था। कैलाश भवन में पार्वतीदेवी अकेली थी।

एक दिन स्नान करने से पहले पार्वती ने अपने शरीर को परिमल भर सुगन्ध द्रव्यों से बनाये हुए तूअर-चने के दाल के पिष्ट (आटा) से मला। थोडा आटा जमीन (फर्श) पर गिरा हुआ था, जिसे बटोर कर पार्वती माई ने अनजाने मन से एक छोटा-सा पुतला बनाया था, जो देखने में काफी सुन्दर लगता था।

पुतले को पार्वती देवी ने बालक का रूप दिया। प्रतिमा ने पार्वती जी का मन लुभाने लगा, तो देवी ने उसमें अचानक और अनजाने में ही प्राण फूंक दिया। वह बालक उचलते हुए लाड प्यार के साथ आकर पार्वती की गोद में आ गिरा एवं उससे मनमाने बातें करने लग गया, तो पार्वती देवी को वह अपना ही लाडला प्यारा बच्चा मालूम होने लगा!! उस माँ ने अपने से बनाये उस बालक से चूम पुचकारते हुए बातें करने लगी!!

इतने में पार्वतीदेवी को अपने स्थान का याद आया और वह गुसलखाने में चली गयी।

जाते-जाते पार्वती अपने नवजात शिशु से कह गयी, देख बेटे! मैं स्नान करने जा रही हूँ। तू इधर द्वार पर तैनात रहो। और, किसी भी हालत में किसी भी मनुष्य को अंदर आने न देना।

पिता-पुत्र का युद्ध

देहिल पिष्ट से बना पार्वतीमाई का लाडला पुत्र एक भाला लेकर अपनी माँ के गुसलखाने पर तैनात रह गया।

इतने में, कई दिन हुए त्रिपुरासुर युद्ध में गये हुए शंकर भगवान युद्ध की समाप्ति पर विजयोत्सव के जोश में अपने मंदिर में आ धमका और अपनी प्रियपत्नी से मिलने आतुर था।

शिवपरमात्मा स्नान गृह पर आधमका। अंदर घुसने का जतन किया। मगर द्वार पर तैनात बाल योद्धा ने उसे अंदर जाने न दिया। अपना भाला अडाया।

शिव ने उस नन्हें से बालक हो द्वार पर से हटाना चाहा, मगर न! उस बालक में आदिशक्ति की ताकत जो भरी थी।

शंकर रुद्र बन गया। अपनी पूरी ताकत जता के बालक पर वार किया। आखिर, बालक ''माँ!!?!!'' चिल्लाते हुए धरती पर गिर कर मर गया।

स्नान गृह के अंदर पार्वती को अपने प्यारे बच्चे की चीख सुनायी दी! वह तुरंत बाहर आई और अपने लाडले पुत्र के शरीर को गोद में लेकर बिलख-बिलख कर रोने लगी।।

शंकर जी को परिचारिकाओं ने बालक का जन्म वृत्तांत कह सुनाया।

अब शंकर परमात्मा को उस मृत बालक पर एक अजीब वात्सल्य जाग उठा। पार्वती ने अपने जागदोद्धारक पति से अपने लाडले प्रिय प्यारे बच्चे को जिन्दा करने का आक्रोश किया।

ब्रह्मेंद्रादि देव गण पल में उधर प्रत्यक्ष हो गये।

विघ्नेश्वर का आविर्भाव

सब देवताओं ने देखा कि पार्वतीदेवी का लाडला पुत्र प्राण त्याग कर धरती पर पडा हुआ था। उसका सिर कट कर शरीर से अलग होकर पडा हुआ था। अब क्या करें? देखा जाय, तो पार्वती का दुःख और मनोवेदना देखी न जा रही है। आखिर शिव पार्वतियों का कोख जनी संतान नहीं हैं।

ब्रह्मेन्द्रादि सभी देवतालोग एक साथ मिल कर यह निश्चय किया कि किसी भी हालत में अब इस मृत बालक को जीवन दान कर, उसे जिलाना चाहिए, क्योंकि परम शिव की अभी तक पार्वतीदेवी में जन्मी संतान नहीं है। यह बालक अभी तो मर चुका, अतः शिव और पार्वती निस्संतान कहलायेंगे। आखिर, देवता भी क्यों न हो, उनकी संतान हो जानी चाहिए, नहीं तो साक्षात् पार्वती भी वन्ध्या कहलायेगी।

महाविष्णु ने अनुमति दी। ब्रह्म ने अंगीकृति में सिर हिलाया और देव सिपाहियों को अनुमति दी कि कोई भी प्राणी अभी उत्तर की दिशा की ओर सिर किये सोता हुआ हो, तो उसका सिर काट कर ले आये।

देव कर्मचारियों ने देखा, तो धरतीमंडल पर पुष्पभद्रा नामक नदी के तट पर एक हाथीराजा उत्तर

की तरफ सिर किये सो रहा था। देवताओं ने झट उसका सिर काटा और कैलाश में लाया। देव वैद्य अश्विनी देवताओं ने उस गजराज के सिर को पार्वती के मृत शिशु से लगा कर, उसे पुनर्जीवित बनाया।

पार्वती की खुशी का कोई ठिकाना नहीं रहा। शिवजी ने सानंद अपने पुत्र को गोद में बिठा कर लाड किया। ब्रह्म, इन्द्र आदि देवप्रमुख हर्षित हुए। और सभी देवताओं ने खुशी से नाच गान किया। सर्वत्र मोद-आमोद का वातावरण छा गया। तीन लोकों में यह वार्त्ता बिजुरी बन कर छा गयी।

विघ्नराज का यों आविर्भाव, मरण एवं पुनर्जीवन भी संभवित हो गया। इस खुशी के अवसर पर देवता लोगों का परिषद बैठा और उस नवजात पार्वतीजी के पुत्र को एक महत्वपूर्ण उपादि दी थी। सब ने मिल कर उसे ''विघ्नराज, विघ्नेश्वर'' नामक उपाधि दी थी। सब ने कहा कि जो कोई मनुष्य जो भी काम आरंभ करने से पहले विघ्नेश्वर की प्रार्थना करे, तो उसके कार्य का निर्विघ्न संपन्न बन जायेगा।

विघ्नेश्वर, विघ्नराज के अलावा उसकी और भी उपाधियाँ हैं।

१. गणपति - आगे चल कर विघ्नेश्वर का एक अलग-सा पंथ (मार्ग) चला था। लोग उसका आमोदन करके, विघ्नेश्वर के प्रतिपादित नियमों का पालन करने लगे, तो उसका नाम 'गणपति' पडा। गण यानी समूह, बृन्द का पति होने से उसका नाम 'गणपति' कहलाया गया। गणपति नाम विंध्याचल से उत्तरी राज्यों में ही ज्यादा प्रचलित है।

२. विनायक - विनायक भी कुछ इसी प्रकार का पडा था। 'विनायक' का अर्थ है कि लोगों का नायक या विशेष नायक है।

३. गजानन - गणपति का हाथी का सिर है। अतएव उसका नाम 'गजानन' पडा।

समापन

गणपति शुभंकर देव है। स्मरणमात्र से वह मनुष्यों को शुभ मंगल प्रदान करता है। पश्चिम चालुक्य राजा, जिन्होंने महराष्ट्र के ''वातापि (बादामि)'' को अपनी राजधानी बना कर आज से १२ सौ सालों से पहले शासन किया था, गणपतिबप्पा के महान् उपासक थे। गणपतिमहराज की जयंती भाद्रपद के महीने की चतुर्थी (चौत) दिन पर महान हर्षोल्लास के साथ पूरे हिन्दुस्तान के अंदर ''गणेश चतुर्थी'', ''विनायक चविती'' आदि नामों से मनायी जाती है।

शुक्लांबरधरं विष्णुं शशिवर्णम् चतुर्भुजम्
प्रसन्नवदनम ध्यायेत् सर्व विघ्नोपशांतये।।
अगजानन पद्मार्कं गजाननमहर्निशम्
अनेकदं तं भक्तानां एकदंतमुपास्महे।।

वामन जयंती

वामन अवतार विष्णु के अठारवें तथा त्रेतायुग के पहला अवतार था। इसके साथ ही यह विष्णु के पहले अवतार थे जो मानवरूप में प्रगट हुए। ये बालक रूपी ब्राह्मण अवतार था। इन को दक्षिण भारत में उपेन्द्र के नाम से भी ही जाना जाता है। भाद्रपद शुक्ल द्वादशी वामन जयंती के नाम से प्रचलित है वामनद्वादशी भी कहा जाता है। वामन अवतार श्रीमहाविष्णु भगवान का अठारवाँ अवतार है। भारतीय अवतारवाद में श्रीमहाविष्णु भगवान ने अभय वचन दिया है।

''धरातल पर जब-जब असुरों का साम्राज्य बढता है, सब लोग भय से पीडित हो तब अधर्म का नाश करने के लिये और धर्म की स्थापना करने हेतु हर युग में अवतार लेता हूँ,'' ऐसा वचन के अनुसार श्रीहरि ने वामन अवतार लिया। आज हम यहाँ श्रीहरि विष्णु भगवान का अठारवाँ श्री वामन जी का वृत्तांत का अनुसंधान करवाने जा रहे हैं।

वामन अवतार का प्रयोजन (भगवान ने दिया वचन-माता अदिति को)

पौराणिक कथा के अनुसार पूर्वकाल में असुरराज बलि ने जब महायज्ञ किया तब दैत्य और असुर का संहार करनेवाले श्री वामन भगवान का चरित्र बहुत ही सुंदर है। वामन भगवान कौन था? प्रह्लाद के पुत्र विरोचन, विरोचन के पुत्र बलि महाराज - जो की असुरराज थे। महापराक्रमी और अति बलवान थे, बलिराजा ने अति बल से समस्त देवतागण पे विजय प्राप्त किया, और स्वर्गाधिपति इन्द्र को हराकर स्वर्गराज बन गया। विशेष में बलिराजा ने त्रिलोक पर कब्जा किया। इस वक्त देवता का तेज नष्ट हो गया। इन्द्र शक्तिहीन बन गया। ऐसी परिस्थिति में देवमाता अदिति बहुत दुःखी हुये। अदिति माता ने बडी तपस्या की। अदिति ने अभिष्ट वाणी में भगवान की स्तुति की। अंत में श्रीहरि विष्णु प्रसन्न हुआ और माता अदिति को वचन दिया की मैं आप के गर्भ में प्रवेश कर के पुत्र के रूप में अवतरित हो के, पुत्र बन के आपके संतान की रक्षा करुँगा। देवतागण की रक्षा करके इन्द्रपद पुनःस्थापित करूँगा। ऐसा वचन सुन के माता अदिति बहुत प्रसन्न हुए।

वामन भगवान का जन्म वृतांत

भगवान का वचन सुन के अति खुश होकर माँ अदिति पति कश्यपजी की सेवा करने लगा। कश्यप मुनि सत्यदर्शी थे। उन्होंने समाधि योग से सब हकीकत जान ली। वामन भगवान के जन्म के बारे में बात सुनकर ब्रह्माजी बहुत खुश हुए, जब भगवान ने माता अदिति के गर्भ में प्रवेश किया तब ब्रह्माजी ने दिव्य वाणी में भगवान की दिव्य स्तुति की। जगत्पिता की स्तुति से प्रसन्न होकर भगवान शंख, चक्र, गदा, पद्म-चतुर्भुज रूप में माता अदिति के सामने उपस्थित हुए। प्रभु का रूप बहुत मनोरम था। बहुत ही सुंदर रूप प्रगट हुआ। तब दशो दिशाएँ शुद्ध और पवित्र बन गई,

- श्रीमती प्रीति ज्योतिन्द्र अजवालिया

मोबाइल - ९८२५११३६३६

नदी-सरोवर का जल शीतल हो गया, भूमाता आनंदित बन गई, प्रकृति चारों ओर खील उठी, इस समय चंद्रमाँ श्रवणा नक्षत्र में विराजमान थे। भाद्रपद शुक्ल पक्ष की द्वादशी तीथि, अभिजित मुहूर्त के समय पर माता अदिति की कोख से भगवान का प्रगटन हुआ। सुंदर और प्रसन्नोचित वातावरण था।

उपस्थित तमाम देवतागण तमाम यह नक्षत्रगण और जगत्पिता ब्रह्माजी ने मंगल स्तोत्र का पवित्र गान किया, सूर्यनारायण देव आकाश मार्ग से प्रभु का दर्शन कर रहे थे। शंख, मृदंग, ढोल, शहनाइ का मंगल ध्वनि प्रभु का स्वागत सन्मान कर रही थी। इस पवित्र तिथि विजयद्वादशी, वामनद्वादशी के नाम से प्रचलित हुई।

वामन भगवान का दिव्य स्वरूप

शंख, चक्र, गदा पद्मधारी भगवान योगमाया से अपना रूप को समेट लिया और छोटासा बालक बनके ब्रह्मचारी रूप धारण किया। प्रभु वामन स्वरूप में प्रवेशित हुआ। इस समय वामन भगवान का उपनयन संस्कार और जातिकर्म संस्कार हुआ, भगवान सूर्य ने वामन को गायत्री उपदेश दिया, गुरु बृहस्पति ने यज्ञोपवित (ब्रह्मसूत्र) अर्पण किया, पिता कश्यपजी ने मेखला प्रदान की, भूदेवी ने कृष्णमृगचर्म, चंद्रदेव ने दंड, माता अदिति ने कोपीन (लंगोटा), आकाशदेव ने चत्र, अविनाशी श्रीहरि वामन को ब्रह्माजी ने कमंडल, माता सरस्वती ने रुद्राक्ष की माला, यक्षराजा कुबेर ने भिक्षापात्र अर्पण किया। अंत में माँ जगदंबा ने स्वयं भिक्षा दी। इस तरह वामन भगवान ने कोपिन धारण करके हाथ में कमंडल-भिक्षापात्र धारण करके याचक का रूप धारण किया।

वामन का बलिराजा की यज्ञशाला की ओर प्रयाण... और बलि से वार्तालाप

वामन भगवान को मालूम हुआ की, यशस्वी बलिराजा, भृगुवंशी ब्राह्मण के आज्ञानुसार अश्वमेध

यज्ञ कर रहे है, वामन भगवान ने वामन स्वरूप को लेकर यज्ञशाला की ओर चल दिया, पृथ्वी मांगने के लिए चली लगी।

बलिराजा भृगृकच्छ शहर (गुजरात का भरूच शहर) में नर्मदा नदी के तट पर ऋत्वीजों को साथ में रखकर उत्तम यज्ञ, अनुष्ठान कर रहे थे। वामन भगवान के आने से ऋत्वीजों और यजमानों का तेज अस्त हो गया। याचक स्वरूप वामन बालक का सभी ने बहुत आदर सत्कार किया। बलिराजा ने वामन को आसन दिया और अभिवादन किया, पद प्रक्षालन भी किया और सभी ने चरणामृत भी लिया।

बलिराजा बोले, ''आप हमारे यज्ञ में पधारे की हमारे पितृगण तृप्त हो गये। हमारा कूल पवित्र हो गया।'' मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ? वामन ने उत्तर दिया की, मुझे भेंट, सोगाद, हीरा-जवेरात कुछ भी नहीं चाहिए। मुझे यज्ञशाला बनाने के लिये सिर्फ तीन पद भूमितल चाहिए। वामन की ऐसी वाणी सुनकर बलिराजा हँसने लगा।

इस वक्त दैत्यगुरु शुक्राचार्य सब समझ गया था, उसने बलिराजा को मार्गदर्शन दिया की ये तो स्वयं भगवान है, देवता कार्य सिद्ध करने हेतु अदिति के गर्भ से विष्णु ने जन्म लिया है (एक बात उल्लेखनीय है की वामन भगवान का नाम उपेन्द्र हुआ क्योंकि अपने बडे भाई इन्द्र का शासन सलामत रखने के लिये इन्द्र का छोटा भाई बन कर जन्म लिया।)

बलिराजा ने गुरु को प्रणाम किया की मेरा धन्य भाग्य की खुद भगवान याचक बनकर यहाँ पधारे। वो जो माँगेगा वो मैं देने के लिये वचनबद्ध हूँ। भगवान की इच्छा के अनुसार तीन पद पृथ्वी देने का वचन दिया।

वामन बालक ने बलिराजा को हाथ में जल लेने की आज्ञा दी। संकल्प के लिये, कमंडल में से जल लिया, लेकिन शुक्राचार्य बलि का हितेच्छी थी। इसलिए कमंडल के जलमार्ग में जल रोकने केलिए घुस गया। प्रभु समझ गया उसने कुश से जलमार्ग को ठीक किया, तब गुरु शुक्रचार्य की आँख में घुस गया। शुक्राचार्य की एक आँख चल बसी, शुक्राचार्य यहाँ से भाग गये। बलि ने अंजली में जल लेकर संकल्प किया।

इस समय एक अद्भुत घटना निर्माण हुई, प्रभु वामन ने विराट रूप में आविष्कृत होकर प्रभु ने प्रथम पद में पृथ्वीलोक का समस्त विस्तार नाप लिया, दूसरे पद में स्वर्ग और आकाश नाप लिया, तीसरा पद के लिये कुछ बचा ही नही, तब बलिराज ने कहा की तीसरा पद मेरे सिर पर रख के मुझे धन्य बना लो, आज मेरा अभिमान भंग हुआ है।

वामन भगवान ने बलिराजा को दिया आशिर्वचन

प्रभु ने तीन पद में बलिराजा से तिनों लोक का अधिकार छीन लिया। बलि को बहुत प्रायश्चित हुआ। बलि की भक्ति देखकर भगवान ने उसे आशिर्वचन

के रूप में पाताल लोक का साम्राज्य दे दिया। भगवान ने स्वर्ग पृथ्वी का साम्राज्य पुनः बडे भाई इन्द्र को दिया।

एक बात ऐसी भी है, बलिराजा ने भगवान को पाताल में साथ में रहने का वचन भी लिया था। उस वचन को रखकर भगवान हमेशा के लिये पाताल में क्षीरसागर में चल बसे। स्वर्ग और वैकुंठ निस्तेज बन गया, तब लक्ष्मी जी को प्रभु का विरह सहन नही हुआ। लक्ष्मीजी ने बलिराजा को रक्षा बांध कर भाई बनाया और बलि से भेंट, सोगाद के बदले में श्रीहरि की पाताल से मुक्ति माँगी। इस वक्त प्रभु श्रीहरि ने कहाँ की, बलि का मान रखते हुए मैं चार मास तक पाताल में रहूँगा और ये समय देवशयनी एकादशी से लेकर देवउठी एकादशी तक चलेगा और चातुर्मास के नाम से प्रचलिता होगा।

ऐसी युक्ति करके बलि को भाई बना के लक्ष्मीजी ने प्रभु को मुक्ति दिला दी और प्रभु ने वामन अवतार ले के देवों का कार्य किया।

प्रतिकात्मकता

वामन अवतार के रूप में विष्णु ने बलि को यह बोध दिया की दंभ और अहंकार से जीवन में कुछ भी हासिल नही होता और यह भी की धनसंपदा क्षणभंगुर होती है। ऐसा माना जाता है की विष्णु के दिये वरदान के कारण प्रतिवर्ष बलि धरती पर अवतरित होते है और यह सुनिश्चित करते है की उनकी प्रजा खुशहाल है।

भारत के समस्त श्रीवैष्णव मंदिरों में भाद्रपद शुक्ल द्वादशी (वामनजयंती) का उत्सव बहुत धूम-धाम से मनाया जाता है, भक्तलोग वामन भगवान को ककडी, दही और पंजरी का प्रसाद अर्पण करता है। पुराण में लिखा है कि भक्तलोग वामन वृत्तांत का अध्ययन, मनन करेंगे, तो जन्म बंधन से मुक्त होकर मोक्ष पद को प्राप्त कर लेते है।

ऐसे मुक्तिदाता प्रभु श्री भगवान को कोटि-कोटि वंदन।

जय श्रीमन्नारायण!

नीति पद्यम्

आन्ध्र देश के कबीर श्री वेमना

(संत वेमना की कुछ चुनी हुई रचनायें)

(योगी वेमना की विचारधारा से हिंदी जगत को किसी अंश तक परिचित रखने के उद्देश्य से उनके कतिपय पद्यों का सरल गद्यानुवाद प्रस्तुत किया जा रहा है। इस संग्रह में उन पद्यों को पुनश्च स्थान नहीं दिया गया है, जो कि भूमिका भाग में प्रसंगवश उद्धृत किये गये हैं। इन महात्मा के अब तक उपलब्ध पद्यों की संख्या तीन हजार से कम नहीं है। वर्णित विषय के अनुसार पद्यों का वर्गीकरण भी प्रस्तुत किया जाता है।)

मूर्ख-पद्धति

ओगु नोगु मेच्चु नोनरंग नज्ञानि
भावमिच्चि मेच्चु बरम लुब्धु
बंदि बुरद मेच्चु बन्नीरु मेच्चुना?
विश्वदाभि राम विनुर वेमा ॥१॥

मूर्खों की प्रशंसा मूर्ख ही करते हैं। अज्ञानवश लोग परम लोभी प्राणियों का अभिनंदन कर डालते हैं। ठीक तो है, सुअर कीचड़ ही की प्रशंसा करता है, न कि गुलाब-जल की।

क्रमशः

(गतांक से)

तिरुपति श्रीवेङ्कटेश्वर

(तिरुपति बालाजी)

हिन्दी अनुवाद - प्रो.यद्दनपूडि वेङ्कटरमण राव
प्रो.गोपाल शर्मा

अध्याय - ५

श्रीस्वामिपुष्करिणी तथा अन्य तीर्थों का माहात्म्यम्

श्रीस्वामिपुष्करिणी भगवान विष्णु की विहार पुष्करिणी है। इस का मूल स्थान वैकुण्ठ धाम है। श्रीलक्ष्मी और भूदेवी के लिए अत्यंत प्रिय है। इसकी जल राशि अति पवित्र, सुगन्ध युक्त, स्वच्छ, निर्मल और ग्रहणीय है। यह गंगा और अन्य पवित्र नदियों की जन्मधात्री है। गरुड ने इसे वैकुण्ठ से लाकर श्रीविष्णु के विहार के लिए यहाँ स्थापित किया है। श्रीस्वामिपुष्करिणी सभी पापों का परिहारक है। स्वर्ग की विरजा नदी के समान पापों को नाश करती है। समयानुसारेण उन्नति प्रदान करती है। इसमें नित्य स्नान सभी पापों को दूर कर सत्फल प्रदान करता है। इसके जल के दर्शन मात्र से और स्पर्श मात्र से समस्त भौतिक इच्छाएँ पूरी होती हैं। गंभीरता से इसका ध्यान करना अत्यंत महिमा युक्त बनाता है।

(वराह पु. भाग-1, अध्याय - 3, श्लो. 17 - 21)

स्वामिपुष्करिणी तट पर निवास करनेवाले चराचर प्राणी देवताओं से अधिक संपन्न माने जाते हैं। लेकिन वैभव को बहुत कम लोग जानते हैं तथा पहचानते कम हैं (वराह पु. श्लो. 22 - 23)। इसमें स्नान से प्रायश्चित का फल भी सद्यःप्राप्त होता है। पुष्करिणी स्नान सभी कामनाओं को पूरा करता है और वेङ्कटाद्रीश से संबद्ध करता है। इससे प्राप्त फल का मूल्य अवर्णनीय और अतुलनीय है। स्वामिपुष्करिणी में स्नान, सद्गुरु की सेवा से ज्ञान प्राप्ति और एकादशी व्रत को रखना - इन तीनों की प्राप्ति अत्यंत कठिन है। इससे अधिक, मनुष्य जन्म की प्राप्ति, संपूर्ण आयु की प्राप्ति, उचित कार्य संपन्न करना तथा स्वामिपुष्करिणी में स्नान करना, ये सभी सामान्यतः असंभव है।

स्वामि पुष्करिणी स्नानं सद्गुरोहः पाद सेवनम्।
एकादशी व्रतं चापि त्रयं अत्यंत दुर्लभम्।।

(श्लो. 25)

दुर्लभं मानुषं जन्म दुर्लभं तत्र जीवनम्।
स्वामि पुष्करिणी स्नानं त्रयं अत्यंत दुर्लभम्।।

(श्लो. 26)

स्वामिपुष्करिणी में स्नान निहित पाप विनाशन शक्ति असीम और अनंत है। तारकासुर संहार के कारण श्रीसुब्रह्मण्य स्वामी को जो ब्रह्महत्या पाप लगा था। उसे

स्वामिपुष्करिणी के स्नान ने मिटाया था। (वरा. पु. श्लो. 28 और 29)। विष्णु भगवान को अर्पित नित्य कार्यक्रमों और आनुष्ठानों का निर्देश वेदों द्वारा किया गया है। लेकिन स्वामिपुष्करिणी के तट पर, समय-समय पर किये जानेवाले धार्मिक अनुष्ठानों से शारीरिक कमियाँ और पंगुताएँ दूर हो जाती हैं। इसका उल्लेख तो नहीं हैं, लेकिन इसके साक्ष्य प्रस्तुत हैं। वास्तव का संदर्भ यह स्पष्ट करता है। गौतम ऋषि ने इन्द्र को सहस्राक्ष होने का शाप दिया था। इससे उसके शरीर में सहस्र आँखें उद्भूत हुईं। यानी सहस्र रंध्र पडे। इन्द्र को उनसे मुक्ति स्वामिपुष्करिणी में स्नान से मिली है।

(वरा. पु. श्लो. 31 - 32)।

दशरथ पुत्र राम रावण संहार के लिए भाई लक्ष्मण, हनुमान और सुग्रीव सहित पंपा सरोवर के तट प्रान्त से गुजरते हुए अंजनादेवी की प्रार्थना पर वेङ्कटाचल पधारे थे। उस समय श्रीरामचन्द्र जी ने अपने परिवार सहित स्वामिपुष्करिणी में स्नान किया। एक रात वहीं ठहरे। तत्पश्चात् उन्होंने रणभूमि की ओर प्रस्थान किया। लंका पहुँचकर रावण पर विजय प्राप्त की (वरा. पु. अ. 41, श्लो. 3 - 6)। रावण और उसकी शक्तिशाली सेना पर विजय प्राप्ति के साथ-साथ उन्हें सीता भी मिली। सीता माता के साथ वे अयोध्या पहुँचे। राज्य सिंहासन पाकर अनन्त काल पर्यन्त राज्य किया। राम की विजय और राज्य प्राप्ति का श्रेय स्वामिपुष्करिणी स्नान को भी मिलता है। (वरा. पु. अ. - 42, श्लो. 27-28)।

श्रीवराह स्वामी ने वेङ्कटाचल की महिमा और श्रीस्वामिपुष्करिणी की महत्ता के बारे में अपनी देवेरी धरणी देवी (भूदेवी) को बताया था। साथ-साथ अन्य पवित्र तीर्थों की महानता भी उसी संदर्भ में बतायी। उस समय उन्होंने स्पष्ट घोषित किया है कि तीनों लोकों के समस्त पवित्र तीर्थों में स्नान से प्राप्त होनेवाले पुण्य के समान फल मात्र 'स्वामिपुष्करिणी' स्नान से मिल जाता है। पवित्र स्वामिपुष्करिणी की सेवा के लिए त्रिलोकों के तीर्थ राज आकर इस पवित्र गिरि पर विराजमान हुए हैं।

(वरा. पु. भाग - 2, अ. - 1, श्लो. 50 - 52)

बहुत पुराने समय में शंखण नामक एक पदच्युत राजा था। वे स्वामिपुष्करिणी के उत्तरी तट पर छः मास पर्यन्त कुटिया बनाकर रहे। उस कुटिया के पास एक वल्मीक भी था। पुष्करिणी में तीन बार पवित्र स्नान कर पवित्र मन से रोज श्रीवेङ्कटेश्वर की उपासना करते थे। राजा की भक्ति पूर्वक उपासना से प्रसन्न होकर, भगवान श्रीवेङ्कटेश्वर श्रीदेवी और भूदेवी सहित अपने भव्य विमान में पुष्करिणी के मध्य से उभरकर प्रकट हुए। राजा शंखण को दर्शन देकर राज्य की पुनःप्राप्ति का वर दिया। उस समय ब्रह्म, ऋषि-मुनि, सिद्ध लोग और सप्त ऋषि भी वहाँ थे। उनके समक्ष ही स्वामी ने राजा से कहा- ''हे राजन्! जब आपने श्रीस्वामिपुष्करिणी में पवित्र स्नान किया तभी आप में महा-भक्ति उत्पन्न हो गयी। इतना ही नहीं, आप का राज्य आप को मिल ही गया। इसी प्रकार जो भी स्वामिपुष्करिणी में पवित्र स्नान करता है उसके सारे पाप दूर हो जाते हैं और स्वामित्व उसकी भक्ति की मात्रा और प्रखरता के अनुरूप मिल जाता है। उसका मन स्वच्छ निखरता है। अंततोगत्वा मुझे प्राप्त करता है। वह कभी भी दूसरों की अधीनता में नहीं रहेगा। पराधीन नहीं होगा।''

भगवान की इस घोषणा के पश्चात् देवताओं ने उच्च स्वर में कहा कि इस पुष्करिणी को ''श्रीस्वामिपुष्करिणी'' कहना ही समुचित होगा। इससे संबन्धित चिरंतन महत्ताओं के कारण ही यह सकल तीर्थ साम्राज्ञी (स्वामिनी) हैं। प्राचीन रूढियों के अनुसार भी यह तीर्थ रानी है। स्वयं प्रभु ने इसे उपयुक्त रूप से व्याख्यायित किया है। यही इस तीर्थ की महानता और शक्ति का निरूपक है। ''स्वामित्वम्'' प्रदान करना इस पुष्करिणी का प्रथम गुण है। स्वामी की उत्कृष्टता का अधिसूचक है यह स्वामिपुष्करिणी। इस तीर्थ का महत्व इस प्रकार उद्घोषित है -

मा शुचस्त्वं मयादत्तं स्वामित्वं पूर्वं आगतम्।

(श्लो. 37)

यास्मात तव महाभक्तिर् - स्वामि - पुष्करिणी जले।
येकेचन समागत्य स्नानं कुर्वन्ति संयुताः।।

(श्लो. 38)

स्वामि पुष्करिणी तीर्थे स्वामित्वं प्राप्नुयुर्नराः।
तेषां व्रतानुगुण्येन स्वामित्वं भवति ध्रुवम्।।

(श्लो. 39)

स्याद्धि तेषां पराधीन भावलेशः कदापि न।
त्वं च गत्वा महीपाल कुरु राज्यं अकण्टकम्।।

(श्लो. 40)

समक्षं देवदेवानां इत्युक्त्वन्तरधीयत।
स्वामि पुष्करिणी शब्दो रुढास तस्मिनत्सरोवरे।।

(श्लो. 41)

व्युत्पत्तिः कथिता तस्यासतीर्थानां स्वामिनि यतः।
स्वामि पुष्करिणीत्येव तस्मात पूर्वं पुरातनः।।

(श्लो. 42)

प्रोक्तेदानीं भगवता व्युत्पत्तिस् तस्य सम्मता।
स्वामित्वस्य प्रदानाचोह स्वामि पुष्करिणी त्वियम्।।

(श्लो. 43)

अहो! महत्वं तीर्थस्य.................।

(श्लो. 44)

(वरा. पु. भाग - 1, अ. - 6, श्लो. 37 - 44)

स्वामिपुष्करिणी का ''मुक्कोटि पर्व'' (तीन करोड तीर्थों का मिलन पर्व) धनुर्मास के शुक्ल द्वादशी को मनाया जाता है। यह साधारणतः दिसंबर - जनवरी के बीच आता है। इस तिथि पर सूर्योदय के समय के साथ विष्णु चक्र (चक्रत्ताऴ्वार) का उत्सव सहित स्वामिपुष्करिणी में स्नान संपन्न होता है। विश्वास है कि उस समय सकल देवता समूह पुष्करिणी में प्रवित्र स्नान के लिए वेङ्कटाद्रि पहुँचता है। यह दिन अत्यंत पवित्र दिन माना जाता है। भक्त जन तीर्थ स्नान करते हैं। (स्कंद पु. भाग - 1, अ. 17, श्लो. 20 - 23)।

क्रमशः

अनंत पद्मनाभ व्रत

- डॉ.जी सुजाता
मोबाइल - ८९८५८७११३०

अनंत पद्मनाभ स्वामी व्रत को 'अनंत व्रत', 'चतुर्दशी व्रत' भी कहा जाता है। यह व्रत भगवान विष्णु को समर्पित है। भगवान विष्णु के विश्राम करते स्वरूप को अनंत पद्मनाभ स्वरूप कहा जाता है। शेषनाग पर शयन मुद्रा में विश्राम करते हुए भगवान विष्णु की पूजा हर साल भाद्रपद शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को की जाती है। सृष्टिकर्ता भगवान श्रीमहाविष्णु अनंत है, जिसका न जन्म है न मृत्यु। अनंत शब्द ही अर्थ देता है अंतहीन। अनंत पद्मनाभ व्रत करने से अनंत आनंद और खुशी मिलती है। चतुर्दशी के दिन भगवान विष्णु का अनंतपद्मनाभ स्वामी के रूप में पूजा करने से सारे दुःख दूर होंगे और सुख-आनंद प्राप्त होगी। जो इस अनंत व्रत पूजा पूरी श्रद्धा और ईमानदारी से करता है। उसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जैसे कई लाभ प्राप्त होंगे।

पौराणिक मान्यता के अनुसार अनंत पद्मनाभ व्रत की शुरुआत महाभारत काल से हुई थी। भविष्योत्तर पुराण में भगवान श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर के अपने चौदह साल के वनवास के दौरान अनंतव्रत करने का सुझाव दिया।

मान्यता है कि इस दिन व्रत रखने के साथ-साथ यदि कोई व्यक्ति श्रीविष्णु सहस्त्रनाम स्तोत्र का पाठ करता है, तो उनकी समस्त मनोकामना पूर्ण होती है, धन-धान्य, सुख-संपदा और संतान आदि की कामना से यह व्रत किया जाता है। महाभारत की कथा के अनुसार जब कौरवों ने छल से जुए में पांडवों को हरा दिया था। इसके बाद पांडवों को अपना राजपाट त्याग कर वनवास जाना पडा, वहाँ उन्होंने बहुत कष्ट उठाए। ऐसे में जब एक दिन भगवान श्रीकृष्ण पांडवों से मिलने वन आए तो भगवान श्रीकृष्ण को देखकर युधिष्ठिर ने कहा कि हे मधुसूदन, हमें इस पीडा से निकलने का और दोबारा राजपाट प्राप्त करने का उपाय बतायें, तब श्रीकृष्ण ने कहा कि आप सभी भाई पत्नी समेत भाद्रपद शुक्ल चतुर्दशी का व्रत रखें और अनंत भगवान की पूजा करें। इस पर युधिष्ठिर ने अनंत भगवान के बारे में जिज्ञासा प्रकट की तो श्रीकृष्ण जी ने कहा कि वह भगवान विष्णु का ही एक रूप हैं। चातुर्मास में भगवान विष्णु शेषनाग की शैय्या पर अनंत शयन में रहते है, अनंत भगवान ने ही वामन अवतार में तीन पद में ही तीनों लोकों को नाप लिया था, इन के आदि और अंत का पता नहीं है, इसलिए ये अनंत कहलाते हैं। इसलिए इनके पूजन से आपके सभी कष्ट समाप्त हो जायेंगे। इस संदर्भ में श्रीकृष्ण जी ने ऋषि कौण्डिन्य एवं उसकी पत्नी सुशीला की गाथा सुनाते हैं, अनंत व्रत का लगातार चौदह वर्षों तक पालन करने से ऋषि कौण्डिन्य और सुशीला के जीवन में फिर से खुशियाँ आयी। श्रीकृष्ण की सुझाव से पांडवों ने अपने वनवास में अनंत व्रत का पालन किया और महाभारत युद्ध में विजय प्राप्त की।

पूजा की विधि :

अग्निपुराण में अनंत पद्मनाभ व्रत के महत्व का वर्णन मिलता है। इस दिन प्रातःकाल स्नानादि नित्यकर्मों से निवृत्त होकर, नए वस्त्र धारण, पूजा मंदिर में कलश की स्थापना तथा व्रत का संकल्प किया जाता है। भगवान विष्णु की शेषनाग पर विश्राम करती हुई तस्वीर या मूर्ति की स्थापना करके, मूर्ति के सामने १४ गांठवाला धागा रखकर, श्रीहरि के साथ उसकी भी पूजा की जाती है। अनंत धागा के चौदह गांठ चौदह लोकों की प्रतीत मानी जाती है। हर गांठ में भगवान विष्णु के विभिन्न नामों से पूजा की जाती है। पहले अनंत, फिर पुरुषोत्तम, ऋषिकेश, पद्मनाभ, माधव, वैकुंठ, श्रीधर, त्रिविक्रम, मधुसूदन, वामन, केशव, नारायण, दामोदर एवं गोविंद की पूजा की जाती है। पूजा में पुष्प, धूप-दीप, चंदन, नैवेद्य, उपचारों के साथ विधिविधान से भगवान अनंत की पूजा अर्चना की जाती है।

'ॐ अनंताय नमः' मंत्र का निरंतर जाप करते हुए, भगवान विष्णु की प्रार्थना करके उनकी कथा सुनी जाती हैं। इसके बाद अनंत धागा को हाथ में बांधते हैं। नए धागें का धारण करके, पुराने धागे का त्याग कर देना चाहिए। अंत में ब्राह्मण को भोजन करवाकर, परिवार के साथ स्वयं भोजन ग्रहण करें। इस दिन विष्णु सहस्रनाम स्तोत्र का पाठ करना शुभ माना जाता है। मान्यता है कि इस दिन व्रत रखने के साथ-साथ यदि कोई व्यक्ति श्रीविष्णु सहस्रनामस्तोत्र का पाठ करता है तो उसकी समस्त मनोकामनाएँ पूर्ण होती है। इस व्रत को लगातार १४ सालों तक करने पर विष्णुलोक की प्राप्ति होती है। निर्धन भक्त धनवान एवं निःसंतानों को संतान सुख के साथ मोक्ष की प्राप्ति होती है। इस दिन गणेश विसर्जन भी किया जाता है, इसलिए इस पर्व का महत्व और भी बढ़ जाता है। भारत के कई राज्यों में यह पर्व धूम-धाम से मनाया जाता है।

(गतांक से)

सियाराम ही उपाय

शरणागति मीमांसा
(षष्टम खण्ड)

सियाराम ही उपेय

मूल लेखक
श्री सीतारामाचार्य स्वामीजी, अयोध्या

प्रेषक
दास कमलकिशोर हि. तापडिया
मोबाइल - ९४४९५१७८७९

१११

श्रीमते रामानुजाय नमः

श्री देवराज गुरु कहते हैं कि हे महात्माओं! बहुत परमपद तो चाहते हैं और शरणागति का नाम सुनकर चिढ़ते हैं। ऐसे अधिकारी को माया बन्धन से किस तरह छुटकारा हो सकेगा। श्री गीताजी में तो श्री भगवान अपने श्रीमुख से आज्ञा किये हैं कि :-

''ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं यस्मिन्गाता न निवर्त्तन्तिभूयः।
तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये ह्यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी।।''

अर्जुन जी से आज्ञा करते हैं कि हे अर्जुन! जिस अनादि परमात्मा के जरिये इस संसार के पोषण पालन की प्रवृत्ति चल रही है प्रथम उसी आद्य परमपुरुष परमात्मा की शरण कर लेवे। उसके बाद जहाँ पर जाकर फिर संसार चक्र में नहीं आना होता है उस परमपद के मार्ग का अन्वेषण करें। भगवान की इस श्रीमुख वाणी से यह भाव निकलता है कि शास्त्र नियम के अनुसार परमात्मा की शरण हुए बिना चाहे कितना भी कोई परिश्रम क्यों न करे परन्तु उस परमपद के रास्ते का पता नहीं पा सकेगा। ''दैवो ह्येषा'' इस श्लोक में ''मामेव'' यह पद आया है और ''ततः पदं'' इस श्लोक में ''तमेव'' पद आया है। इन दोनों से यह भाव निकलता है कि एक परमात्मा की ही शरणगति से माया बन्धन छूट सकता है और परमात्मा के ही शरणागतों को परमपद का रास्ता मिल सकता है। इससे जिसको परमपद की इच्छा हो उसको सबसे पहिले चाहिए कि प्यारे परमपदनाथ के श्रीचरणों की शरण हो जाय। साधनस्वरूप कर्मयोग, ज्ञानयोग, भक्तियोग की कठिनता को तथा उसकी शर्तों को श्रवण करके जब अर्जुन जी घबड़ाये तो फिर भगवान आज्ञा किये कि :-

''ईश्वरः सर्व भूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।

इत्यादि -

तमेव शरणं गच्छ सर्व भावेन भारत।
तत्प्रसादात्परां शांतिं स्थानं चाप्स्यसि चाव्ययम्।।

अर्जुन! सब जीवों के भीतर अन्तर्यामी रूप से परमात्मा विराजते हैं। यदि साधन स्वरूप कर्मयोग, ज्ञानयोग, भक्तियोग की कठिनता से तथा उसके शर्तों के पालन से घबड़ाते हो तो सब जीवों के अन्दर अन्तर्यामी रूप से विराजते हुए जो परमात्मा हैं सर्व भाव से उन्हीं की शरणागति कर लो। जब तुम उनके शरणागत हो जावोगे तो उनके अनुग्रह से जब तक संसार में रहोगे तब तक भी तुम्हें परम शान्ति रहेगी और अन्त में उन्हीं के अनुग्रह से तुम्हें विकार रहित जो उनका परंधाम है वह भी प्राप्त हो जायेगा।

श्री देवराज गुरु कहते हैं हे महात्माओं! इस श्लोक में भी ''तमेव'' तथा ''सर्वभावेन'' यह पद आया है। इसका यही भाव भया कि जिसको भगवान के अनुग्रह बल से परंशान्ति पाने की इच्छा हो और भगवान की ही कृपा के बल से परंधाम लेना हो उन्हें चाहिए कि भगवान के शरणागत होकर के रहे। परन्तु शरणागत होने वाले अधिकारी को चाहिए कि भगवान की शरणागति के सिवा इतर उपायों का मन से भी अवलम्ब न लेवे। यह जो शरणागति योग है सो सब शास्त्रों का सारांश विषय है। भगवान जब अर्जुन जी को अठारह अध्याय गीता का उपदेश कर दिये उसके बाद बोले कि :-

''इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद्गुह्यतरं मया।
बिमृश्यैतदशेषेण यथेच्छसि तथा कुरु।।''

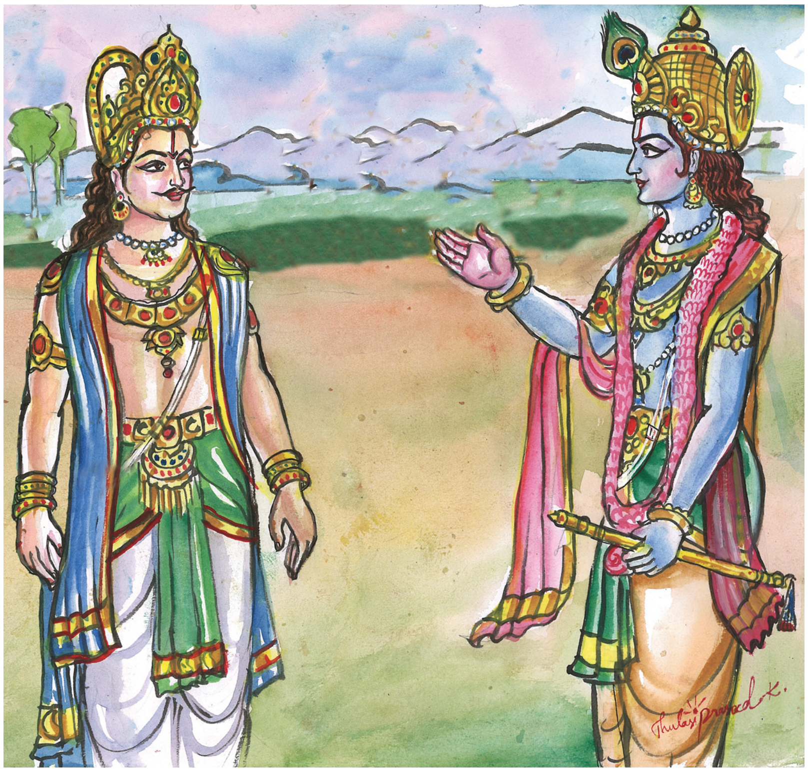

इसका यह भाव भया कि साधन स्वरूप कर्मयोग, ज्ञानयोग, भक्तियोग का स्वरूप उसकी कठिनता और हद्द से ज्यादा जीवों की परतन्त्रता, हे अर्जुन! इस सब बातों को खुलासा करके तुम्हें अठारह अध्याय में समझा दिया हूँ। यह गुह्य से भी गुह्यतर ज्ञान है। इसको अच्छी तरह से मन से विचार कर लो। इसमें जो तुम्हें अच्छा मालूम पड़े उस पर अपनी परिस्थिति कर लो।

इस प्रकार भगवान के श्रीमुख से जब अर्जुन ने सुना तब उनका मुख सूख गया। बहुत सोच में पड़ गये। सोच में पड़ने का यह कारण है कि साधन स्वरूप इन तीनों योगों को करने में अपने को अत्यन्त असमर्थ देखा। क्योंकि एक जगह तो प्रभु ने आज्ञा किया कि साधन रूप से कर्म करो। फिर तुरन्त ही कहा कि ''गहन कर्मणोगतिः'' याने हे अर्जुन! कर्म की गति बहुत गहन है।

''किं कर्म किमकर्मेति कवयोऽप्यत्र मोहिताः।''

कर्म क्या है और अकर्म क्या है इसको समझने में कवि लोग भी मोहित हो जाते हैं। फिर कहा कि :-

''असंयतात्मनायोगो दुष्प्राप इति मे मतिः।''

हे अर्जुन! जिसकी मन इन्द्रियाँ काबू में नहीं है उस अधिकारी से यह कर्मयोग सिद्ध ही नहीं हो सकता, ज्ञानयोग तो बहुत जल्दी पवित्र करने वाला है परन्तु :-

''तत्स्वयं योग संसिद्धः कालेनात्मनि बिन्दति।''

जिसका कर्मयोग नहीं सिद्ध हो पाया है उस अधिकारी को ज्ञानयोग प्राप्त ही नहीं हो सकता। फिर आज्ञा किये कि :-

''प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति।''

हे अर्जुन! शास्त्र बहुत समझाता है कि इस बात को करो, इस बात को छोड़ो। परन्तु शास्त्र का उपदेश क्या करेगा। क्योंकि जिसकी जो प्रकृति पड़ गयी है उसी तरफ उसका खिंचाव होता है। फिर भगवान आज्ञा किये कि :-

''हर्षामर्ष भयोद्विग्नैर्योमुक्तः स तु मे प्रियः।''

अर्जुन! साधन स्वरूप भक्तियोग वाला अधिकारी भी अच्छा है परन्तु उन अधिकारियों में भी हमें वह प्रिय है जिसको प्राकृत चीज पाकर कभी हर्ष नहीं होता है, किसी का व भव देख के ईर्षा नहीं उत्पन्न होती, कभी किसी बात से जिसको भय नहीं होता, जिसके मन में उद्वेग नहीं आता; ऐसे लक्षण वाले जो भक्त हैं वह प्रिय हैं। फिर भगवान आज्ञा किये कि साधन स्वरूप भक्तियोग जिसका सिद्ध हो जाता है वह संसार बन्धन से छूट जाता है। जिसका साधनस्वरूप भक्तियोग सिद्ध हो जायगा, उसकी जरूर मरते समय हमारा ध्यान स्मरण आवेगा। जो साधनस्वरूप भक्तियोग का अधिकारी अन्त में मेरा स्मरण करता हुआ शरीर छोड़ेगा उसको परमगति होगी याने मुक्ति होगी। यदि ऐसा नहीं होगा तो अन्त में उस अधिकारी का जहाँ कहीं मन जायेगा वहाँ हीं उसको जन्म लेना पड़ेगा। जैसे जड़भरतजी को अन्त में हरिण के बच्चे में मन जाने के कारण हरिणी के गर्भ में जाना पड़ा।

गतांक से

श्री रामानुज नूट्रन्दादि

मूल - श्रीरंगामृत कवि विरचित

प्रेषक - श्री श्रीराम मालपाणी
मोबाइल - ९४०३७२७९२७

**कोळुन्दु विट्टोडि प्पडरुम् वेंकोळ् विनैयाल्, निरयत्तु
अळुन्दि यिट्टेनै वन्दाट्कोण्ड पिन्नुम्, अरुमुनिवर्
तोळुम् तवत्तो नेम्मिरामानुजन् तोलपुहळ् शुडर्मिक्कु
एळुन्ददु, अत्ताल् नल्लतिशयम् कण्ड दिरुनिलमे ॥६१॥**

दुर्लभनिष्ठागरिष्ठैर्महात्मभिस्संसेवितस्य तपस्विवरस्य भगवतो रामानुजस्य नित्यसिद्धाः कल्याणगुणाः उपर्युपरि समेधमानप्रबलदुष्कर्मसंचय वशान्नरकनिर्विशेषसंसारसागरे गाढावगाढस्य मम स्वीकरणतोऽपि प्रकाशातिशयमेव प्रापुः; तेन च विस्मितं कृत्स्नमिदं जगत्॥ (अयं भावः लोके तावदुत्तुंगा महात्मानस्समानस्कन्धैरैव संयुज्यन्ते, जघन्यान् दृशाऽपि नावेक्षन्ते। यदि गुणलेशविवर्जितान् दुष्टानात्मनस्सकाशे निक्षिपेयुस्तर्हि ते लौकिकैर्विदूष्यन्ते 'नीचसहवासममी कुर्वन्तस्स्वयमपि नीचतां प्राप्नुवन्ति' इति। वस्तुनो नीचानां संसर्गेण ते नीचा भवन्ति च। भगवान् रामानुजस्तु महामतिभिर्महात्मभिर्बहुभिस्सं - सेवितोऽपि सन् जघन्यान प्यनुगृह्णाति। तत्तु तस्य नावद्यं भवति, प्रत्युत समुत्कर्षायैव कल्पते। यथा हि भगवतो रामचन्द्रस्य गुहादिनीचजनसंसर्गः स्वोत्कर्षायैव कल्पतेस्म तथा ह्येतत्। एवंविधानुसन्धानसरणिरस्यां गाथायां भवति। 'अत्यन्त नीचस्य मम स्वीकरणेन भगवतो रामानुजस्य किमप्यवद्यं नाभूदित्येतावन्मात्रमेव न; अपि तु सर्वजनविस्मयावहो गुणोत्कर्षश्च समजनि' इति कथनेन भगवत्तुल्यमखिलहेयप्रत्यनीक कल्याणैकतानत्वमाचार्यसार्व भौमेऽप्यनपायमिति कथितं भवति॥

विलक्षण निष्ठावाले महापुरुषों से संसेवित एवं प्रपत्तिनामक श्रेष्ठतपस्या से विभूषित हमारे श्रीरामानुज स्वामीजी के नित्यसिद्ध कल्याणगुण, बढते ही रहनेवाले अतिप्रबल पापों की वजह से नरक में (माने नरकप्राय संसारसागर में) डूबे रहनेवाले मेरा स्वीकार करने पर भी (प्रकाशहीन न बनते हुए) अत्यंत प्रकाशवाले बन गये। यह देख कर यह विशाल भूमंडल आश्चर्यमग्न हुआ। (विवरण - यह भाव है - लोक में हम देख रहे हैं कि ज्ञान अनुष्ठान इत्यादि से श्रेष्ठ महात्मा लोग अपने सदृश श्रेष्ठ जनों का ही संग करते हैं; नीच जनों की तो

सर्वथा उपेक्षा ही करते हैं। क्योंकि नीच-सहवास करने से उनकी बदनामी होगी और नीचता भी आ जायेगी। परंतु भगवान श्रीरामानुजस्वामीजी स्वयं श्रेष्ठ पुरुषों से सेवित होते हुए भी नीच जनों पर भी अनुग्रह करते हैं। और इसमें इस बात का आश्चर्य है कि उक्त प्रकार नीचों पर अनुग्रह करने से उनकी महत्ता नहीं घटेगी; उलटे बढेगी। जैसे गुहदेव प्रभृति नीच जनों से मिलने से श्रीरामचंद्रजी को कोई क्षति नहीं पहुँची, बल्कि उनका उत्कर्ष ही बढा, ठीक इसी प्रकार श्रीरामानुजस्वामीजी को मेरे (अमुदनार के) स्वीकार से गुणोत्कर्ष ही मिला, नतु कोई दोष लगा। भगवान के सदृश आप का यह अखिलहेय प्रत्यनीक कल्याणैकतानता (माने सकल दोष विरोधिता और समस्त कल्याणगुणशालिता) देख कर सारी जनता आश्चर्यमुग्ध हो उठी।)

क्रमशः

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

लेखक लेखिकाओं से निवेदन

सप्तगिरि पत्रिका में प्रकाशन के लिए लेख, कविता, रचनाओं को भेजनेवाले महोदय निम्नलिखित विषयों पर ध्यान दें।

१. लेख, कविता, रचना, अध्यात्म, दैव मंदिर, भक्ति साहित्य विषयों से संबंधित हों।

२. कागज के एक ही ओर लिखना होगा। अक्षरों को स्पष्ट व साफ लिखिए या टैप करके मूलप्रति डाक या ई-मेइल (hindisubeditor@gmail.com) से भेजें।

३. किसी विशिष्ट त्यौहार से संबंधित रचनायें प्रकाशन के लिए ३ महीने के पहले ही हमारे कार्यालय में पहुँचा दें।

४. रचना के साथ लेखक धृवीकरण पत्र भी भेजना जरूरी है। 'यह रचना मौलिक है तथा किसी अन्य पत्रिका में मुद्रित नहीं है।'

५. रचनाओं को मुद्रित करने का अंतिम निर्णय प्रधान संपादक कार्य होगा। इसके बारे में कोई उत्तर प्रत्युत्तर नहीं किया जा सकता है।

६. मुद्रित रचना के लिए परिश्रमिक (Remuneration) भेजा जाता है। इसके लिए लेखक-लेखिकाएँ अपना बैंक प्रथम पृष्ठ जिराक्स (Bank name, Account number, IFSC Code) रचना के साथ जोड करके भेजना अनिवार्य है।

७. धारावाहिक लेखों (Serial article) का भी प्रकाशन किया जाता है। अपनी रचनाओं को निम्न पते पर भेजिए-

प्रधान संपादक,
सप्तगिरि कार्यालय,
ति.ति.दे.प्रेस कांपौन्ड, के.टी.रोड,
तिरुपति – ५१७ ५०७. चित्तूर जिला।

धन्वन्तरिध्यानम्

अच्युतानन्त गोविन्द
विष्णो नारायणाऽमृत।
रोगान्मे नाशयाऽशेषान्
आशु धन्वन्तरे हरे ॥१॥

आरोग्यं दीर्घमायुष्यं
बलं तेजो धियं श्रियं।
स्वभक्तेभ्योऽनुगृह्णन्तं
वन्दे धन्वन्तरिं हरिम् ॥२॥

धन्वन्तरेरिमं श्लोकं
भक्त्या नित्यं पठन्ति ये।
अनारोग्यं न तेषां स्यात्
सुखं जीवन्ति ते चिरम् ॥३॥

ओं नमो भगवते वासुदेवाय धन्वन्तरये
अमृतकलशहस्ताय वज्रजलौकहस्ताय
सर्वामयविनाशनाय त्रैलोक्यनाथाय
श्रीमहाविष्णवे स्वाहा।

ओं वासुदेवाय विद्महे सुधाहस्ताय धीमहि
तन्नो धन्वन्तरिः प्रचोदयात्।

श्री वराहाष्टोत्तरशतनामावलिः

ओं श्रीवराहाय नमः
ओं महीनाथाय नमः
ओं पूर्णानन्दाय नमः
ओं जगत्पतये नमः
ओं निर्गुणाय नमः
ओं निष्कलाय नमः
ओं अनन्ताय नमः
ओं दण्डकान्तकृते नमः
ओं अव्ययाय नमः
ओं हिरण्याक्षान्तकृते नमः १०
ओं देवाय नमः
ओं पूर्णषाड्गुण्यविग्रहाय नमः
ओं लयोदधिविहारिणे नमः
ओं सर्वप्राणहिते रताय नमः
ओं अनन्तरूपाय नमः
ओं अनन्तश्रिये नमः
ओं जितमन्यवे नमः
ओं भयापहाय नमः
ओं वेदान्तवेद्याय नमः
ओं वेदिने नमः २०
ओं वेदगर्भाय नमः
ओं सनातनाय नमः
ओं सहस्त्राक्षाय नमः
ओं पुण्यगन्धाय नमः
ओं कल्पकृते नमः
ओं क्षितिभृते नमः
ओं हरये नमः
ओं पद्मनाभाय नमः
ओं सुराध्यक्षाय नमः
ओं हेमाङ्गाय नमः ३०
ओं दक्षिणामुखाय नमः
ओं महाकोलाय नमः
ओं महाबाहवे नमः
ओं सर्वदेवनमस्कृताय नमः
ओं हृषीकेशाय नमः
ओं प्रसन्नात्मने नमः
ओं सर्वभक्तभयापहाय नमः
ओं यज्ञभृते नमः
ओं यज्ञकृते नमः
ओं साक्षिणे नमः ४०
ओं यज्ञाय नमः
ओं यज्ञवाहनाय नमः
ओं हव्यभुजे नमः
ओं हव्यदेवाय नमः
ओं सदाव्यक्ताय नमः
ओं कृपाकराय नमः
ओं देवभूमिगुरवे नमः
ओं कान्ताय नमः
ओं धर्मगुह्याय नमः
ओं वृषाकपये नमः ५०
ओं स्त्रवत्तुण्डाय नमः
ओं वक्रदंष्ट्राय नमः
ओं नीलकेशाय नमः
ओं महाबलाय नमः
ओं पूतात्मने नमः
ओं वेदनेत्रे नमः
ओं वेदहर्तृशिरोहराय नमः
ओं वेदान्तविदे नमः
ओं वेदगुह्याय नमः
ओं सर्ववेदप्रवर्तकाय नमः ६०
ओं गभीराक्षाय नमः
ओं त्रिधाम्ने नमः
ओं गभीरात्मने नमः
ओं अमरेश्वराय नमः
ओं आनन्दवनगाय नमः
ओं दिव्याय नमः
ओं ब्रह्मनासासमुद्भवाय नमः
ओं सिन्धुतीरनिवासिने नमः

ओं क्षेमकृते नमः
ओं सात्त्वतां पतये नमः ७०
ओं इन्द्रत्रात्रे नमः
ओं जगत्रात्रे नमः
ओं इन्द्रदोर्दण्डगर्वघ्ने नमः
ओं भक्तवश्याय नमः
ओं सदोद्युक्ताय नमः
ओं निजानन्दाय नमः
ओं रमापतये नमः
ओं श्रुतिप्रियाय नमः
ओं शुभाङ्गाय नमः
ओं पुण्यश्रवणकीर्तनाय नमः ८०
ओं सत्यकृते नमः
ओं सत्यसङ्कल्पाय नमः
ओं सत्यवाचे नमः
ओं सत्यविक्रमाय नमः
ओं सत्येनिगूढाय नमः
ओं सत्यात्मने नमः
ओं कालातीताय नमः
ओं गुणाधिकाय नमः
ओं परस्मै ज्योतिषे नमः
ओं परस्मै धाम्ने नमः ९०
ओं परमपुरुषाय नमः
ओं पराय नमः
ओं कल्याणकृते नमः
ओं कवये नमः
ओं कर्त्रे नमः
ओं कर्मसाक्षिणे नमः
ओं जितेन्द्रियाय नमः
ओं कर्मकृते नमः
ओं कर्मकाण्डस्य
सम्प्रदायप्रवर्तकाय नमः
ओं सर्वान्तकाय नमः १००
ओं सर्वगाय नमः
ओं सर्वार्थाय नमः
ओं सर्वभक्षकाय नमः
ओं सर्वलोकपतये नमः
ओं श्रीमते श्रीमुष्णेशाय नमः
ओं शुभेक्षणाय नमः
ओं सर्वदेवप्रियाय नमः
ओं साक्षिणे नमः १०८

॥इति श्रीवराहाष्टोत्तरशतनामावलिः॥

दि. २२-०८-२०२१ को तिरुपति श्री गोविंदराजस्वामी मंदिर में आईना महल (दर्पण महल) को पुनःप्रारंभित करते हुए ति.ति.दे. कार्यनिर्वहणाधिकारी डॉ.के.एस.जवहर रेड्डी, आई.ए.एस., इस कार्यक्रम में श्रीश्रीश्री बडा जीयर स्वामीजी, ति.ति.दे. संयुक्त कार्यनिर्वहणाधिकारिणी श्रीमती सदा भार्गवी, आई.ए.एस., और अन्य उन्नताधिकारिगण ने भाग लिया है।

दि. १८-०८-२०२१ से दि. २०-०८-२०२१ तक तिरुमल मंदिर में उभयदेवेरियों सहित श्री मलयप्पस्वामीजी को संपन्न पवित्रोत्सव के दृश्य। इस संदर्भ में ति.ति.दे. कार्यनिर्वहणाधिकारी डॉ.के.एस.जवहर रेड्डी, आई.ए.एस., धर्मपत्नी सहित अतिरिक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री ए.वी.धर्मारेड्डी, आई.डी.ई.एस., और अन्य उन्नताधिकारिगण ने भाग लिया है।

ति.ति.दे. के मंदिरों में उपयोगित फूल माला निर्माल्य से बनी अगरबत्ती का निर्माण शुरू कर दिया है। इसके अंतर्गत ति.ति.दे. कार्यनिर्वहणाधिकारी डॉ.के.एस.जवहर रेड्डी, आई.ए.एस., ने निरीक्षण किया गोशाला, तिरुपति में ३०-०८-२०२१ को।

'नवनीत सेवा' प्रारंभोत्सव के संदर्भ में मक्खन के साथ छिड़के करते हुए ति.ति.दे. कार्यनिर्वहणाधिकारी डॉ.के.एस.जवहर रेड्डी, आई.ए.एस., चित्र में ति.ति.दे. अध्यक्ष जी और अन्य उन्नताधिकारिगण।

अलौकिक समारोह

- डॉ.विजयप्रकाश त्रिपाठी
मोबाइल - ९८३५५११०८३

अयोध्या की राजसभा के शुभ वैभव का वर्णन करना किसी के वश की बात नहीं है और फिर आज तो महाराजाधिराज श्रीरामचन्द्र जी के राज्याभिषेक की वर्षगांठ का पावन दिन है। आज सम्पूर्ण अयोध्या नवीन सज्ञायुक्त है। राज्य के निवासीगण सुन्दर परिधान से सजे व प्रफुल्लित हैं। वर्षगांठ के इस दिव्य समारोह में देवता ही नहीं, अपितु दैत्यगण भी पधारे हैं, सभी जन श्री राजाधिराज रामचन्द्र जी के श्रीचरणों में अमूल्य उपहार अर्पित कर गौरव प्राप्त कर रहे हैं।

राजभवन में स्थित उच्च राज सिंहासन पर श्रीरामचन्द्र जी अपनी पत्नी जानकी जी के साथ विराजमान हैं। उनके ठीक पीछे की ओर भरत जी छत्र लिए खड़े हैं। दोनों पार्श्वो में सुमित्रानन्दन लक्ष्मण जी व शत्रुघ्न जी चवँर डुला रहे हैं। विभिन्न राज्यों के राजागण इस अलौकिक राजसभा में उपस्थित होकर शोभा बढ़ा रहे हैं। आए हुए अतिथिगणों ने अपने-अपने उपहार राजा रामचन्द्र जी को भेंट कर दिए। अब राजराजेश्वर श्रीरामचन्द्र जी के हाथों से सभी उपस्थित लोगों को वस्त्र-सत्कार भी कर दिया गया। आज राजा राम जी ने अपने भाईजनों को भी अपने पवित्र हाथों से विभूषित किया है।

सबसे अन्त में आए निषादराज गुह। उन्होंने भी उत्तरीय पाकर आनन्द उठाया। बस, एक सज्ञन बचे जो न तो कोई उपहार लाए थे और न राजा रामचन्द्र जी उन्हें कुछ भेंट करना चाहते थे। वे महानुभाव थे - श्री हनुमान जी। उन्होंने अपने को पूर्ण प्रभु के समर्पित कर रखा है। उनके पास अर्पित करने के लिए कुछ भी शेष नहीं है। वे राजाधिराज श्री रामचन्द्र को क्या दें? और महाराज जी के पास कुछ ऐसा नहीं है जो हनुमान जी को प्रदान करें, वह तो स्वयं हनुमान जी के आधीन हैं।

निषादराज गुह के सम्मान हो जाने के उपरान्त सदैव की तरह श्री हनुमान जी आखिर में अपने स्थान से उठे। स्वर्ण शैल की तरह उनका वज्र शरीर बड़ी विनम्रता से झुका हुआ है। वे सूर्य-मुख सदैव की तरह पैरों के निकट घुटनों के बल बैठ गए और अपना मस्तक महाराजाधिराज श्रीराम एवं महारानी सीताजी के चरणों पर रख दिया। राजा-रानी के दोनों हाथ एक साथ हनुमान जी के मस्तक पर आए। समूची राजसभा ने करतल ध्वनि से स्वागत किया।

लेकिन पूर्व की भाँति श्री हनुमान जी उठे ही नहीं। उन्होंने अपना मस्तक उठाया और एक याचक की तरह हाथ फैला दिए। अपना मुख ऊपर उठाए वे महाराजा-महारानी की ओर निहारने लगे। पूरी राजसभा में उत्सुकता फैल गई- आज हनुमान जी क्या चाहते हैं और महाराजा रामचन्द्र जी कौन सी वस्तु हनुमान जी को भेंट करेंगे?

श्रीरामचन्द्र जी का दिव्य मुखमण्डल संकोच से झुका जा रहा था, परन्तु श्री हनुमान जी की याचक दृष्टि का अनुरोध अस्वीकार कर देना उचित है? महाराजा श्रीराम जी ने महारानी सीता की ओर देखा और अति धीरे से अपना दाहिना पैर श्री हनुमान जी के हाथों पर रख दिया।

अचानक हनुमान जी का पूरा शरीर पुलकित हो उठा। उनके शरीर का प्रत्येक रोम-रोम खड़ा हो गया। श्रीरामजी के चरणों को अंजलि में लिए उनके आँसू उन्हें धो रहे थे। वहीं महारानी सीता जी ने झुक कर हनुमान जी के मस्तक पर अपना दाहिना हाथ रख दिया।

(गतांक से)

श्री प्रपन्नामृतम्

(२५वाँ अध्याय)

मूल लेखक - श्री स्वामी रामनारायणाचार्यजी
प्रेषक - श्री रघुनाथदास रान्दड
मोबाइल - ९९००९२६७७३

शारदाशोकनाशक श्रीरामानुजाचार्य का यज्ञमूर्ति को पराजित करना

इसके बाद यज्ञमूर्ति नाम का कोई मायावादी संन्यासी विद्वान् गंगा के किनारे के सभी विद्वानों को जीतता हुआ यतिराज श्रीरामानुजाचार्यजी के विद्या-वैभव का यश सुनकर उनको जीतने के लिए स्वयं ही बहुत से ग्रन्थों को लिखकर एक गाड़ी पर लादकर अपने विद्या के घमण्ड में श्रीरंगम आकर उनसे बोला - ''रामानुजजी! मेरे साथ आप शास्त्रार्थ करें।'' उस पर श्रीरामानुजाचार्य स्वामीजी ने पूछा कि- ''यदि आप हार जायेंगे तो क्या करेंगे?'' यज्ञमूर्ति बोले- ''पराजित होने पर मैं त्रिदण्ड धारण कर श्रीवैष्णव धर्म को स्वीकार कर लूँगा। किन्तु यदि आप पराजित हुए तो आप क्या करेंगे?'' इस पर श्रीभाष्यकार रामानुजाचार्य जी बोले कि- ''मैं अपने ग्रन्थों का त्याग कर दूँगा (अपने सभी ग्रन्थों को आपको दे दूँगा)।'' इस तरह प्रशंसा करके यज्ञमूर्ति और श्रीरामानुजाचार्य अठारह दिनों तक सिंह की तरह गरजते हुये शास्त्रार्थ करते रहे जब कि सत्रहवें दिन यज्ञमूर्ति की कुयुक्तियों से श्रीरामानुजाचार्य की अच्छी युक्तियाँ बाधित सी प्रतीत होने लगीं, जिससे उनके हृदय में बड़ा ही क्षोभ हुआ और रात्रि में वे अपने मठ में आकर भगवान वरदराज की परिक्रमा करके साष्टांग प्रणाम प्रतिपादन करते हुए बोले- ''भगवान श्रीपरांकुशाचार्य, नाथमुनि प्रभृति पूर्वाचार्यों द्वारा प्रवर्तित श्रीवैष्णव दर्शन कभी भी पराजित नहीं हुआ किन्तु आज लगता है कि यह पराजित हो जायेगा। यह सत्य है कि वेदान्त में आपके रूप गुणों का वर्णन है किन्तु यह मृषावादी यज्ञमूर्ति अपनी कुयुक्तियों से आज उनका खण्डन कर रहा है। अब आप जैसा करें, आपके ही हाथ में लज्ञा है।'' ऐसा विज्ञापन करके बिना भोजन किये हुए ही वे इस रात्रि में सो गये।

श्रीरामानुजाचार्य पर प्रसन्न भगवान वरदराज स्वप्न में बोले- ''यतिराज! आपको उदास नहीं होना चाहिये, श्रीवैष्णव दर्शन मायावाद से कभी खण्डित होने वाला नहीं!

यामुनाचार्य रचित मायावाद खण्डन ग्रन्थ देखें और आप जाकर शास्त्रार्थ में यज्ञमूर्ति को पराजित करें।'' स्वप्न के बाद में शीघ्र ही उठे हुए रामानुजाचार्य नित्य कृत्यों का निर्वाह करके भगवान वरदराज को प्रणाम करके अपने शिष्यों के साथ शास्त्रार्थ सभा में आये। उन्हें गम्भीर मुद्रा में आते देखकर यज्ञमूर्ति आश्चर्यचकित हो गया। पुनः उस दिन शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ तो यज्ञमूर्ति बोला कि आज तो आपने विष्णु को ही प्रत्यक्ष किया है, अतः आप और भगवान विष्णु में कोई अन्तर नहीं मालूम पड़ता। यज्ञमूर्ति की वाणी सुनकर सन्तुष्टमना भगवान रामानुजाचार्य जी बोले- ''आपने तो मायावाद के अनुसार ब्रह्म को निर्गुण सिद्ध किया है किन्तु वह परमब्रह्म परमात्मा अखिल कल्याण गुणगणाकर हैं अतः निर्गुण वाक्यों का सगुण वाक्यों से कोई विरोध सिद्ध नहीं होता। यदि ऐसा नहीं होता तो फिर ज्ञानरूप परब्रह्म परमात्मा का निर्वाण करके अज्ञानात्मिका माया लीढ़ उसे कैसे माना जाय या उस माया का निवर्तन करने का दूसरा कौन सा साधन है? यदि अविद्य नित्य है और ब्रह्म भी नित्य है तो फिर अद्वैत की सिद्धि कैसे होगी? इस तरह तो अद्वैत रूपी मदान्ध हाथी अपने द्वैत के पंक में फँसकर अपना प्राण खो देगा। श्रीरामानुजाचार्य की इन मुक्तियों को सुनकर यज्ञमूर्ति ने एकदण्ड को दूर फेंक दिया और उनके चरणों में साष्टांग प्रणिपात निवेदन करते हुये बोला-यतिराज! आज मैं आपसे पराजित हूँ और आप मुझे यज्ञोपवीत तथा त्रिदण्ड देकर अपना शिष्य बनायें। यज्ञमूर्ति की वाणी सुनकर श्रीरामानुजाचार्य बोले- ''चूँकि आपने पहले ही यज्ञोपवीत का त्याग किया है अतः प्रायश्चित रूप में आपको गायत्री का जप करते हुये छः प्राजापत्यों को करना होगा। फिर आपका यज्ञोपवीत संस्कार करके मैं आपको त्रिदण्ड दूँगा।'' श्रीरामानुजाचार्य की बात मानकर यज्ञमूर्ति ने पुनः यज्ञोपवीत एवं शिखा धारण करके ताप पुण्ड्रादि पंचसंस्कारपूर्वक त्रिदण्ड धारण किया। यज्ञमूर्ति को त्रिदण्ड प्रदान करके श्रीरामानुजाचार्य बोले- ''भगवान वरदराज ने मेरा महान उपकार किया है जिसके कारण मुझे यज्ञमूर्ति रूपी ज्ञानपुत्र की प्राप्ति हुई है। इसके बाद उन्होंने उसका देवराज, देवमन्नाथ एवं देवराजमुनि- इन तीन वैष्णवनामों का विधान करके भगवान वरदराज को सन्निधि में ले जाकर उनके अर्चकों से तीर्थ शठकोपादि प्रदान करवाकर स्वयं देवराजमुनि (यज्ञमूर्ति) से भगवान वरदराज की वन्दना करवाकर सानन्द उस दिन आराधनादि करके अपने मठ में शयनार्थ प्रवेश किया। इसके बाद श्रीरामानुजाचार्य ने भट्टनाथ सूरि प्रभृति पूर्वाचार्यों द्वारा प्रणीत चार हजार प्रबन्धों का संग्रह करके यज्ञमूर्ति को पढ़ाते हुए श्रीकुरेशाचार्य, दाशरथि प्रभृति शिष्यों के साथ श्रीरंगम् में रहने लगे।

॥ श्रीप्रपन्नामृत का २५वाँ अध्याय पूरा हुआ ॥

क्रमशः

श्री वेंकटेश्वर परब्रह्मणे नमः

हिन्दू होने के नाते गर्व कीजिए!

* ललाट पर अपने इच्छानुसार (चंदन, भस्म, नामम्, कुंकुम) तिलक का धारण करें।
* नहाने के बाद निम्न भगवन्नामों में से किसी एक का एक पर्याय में १०८ बार जप करें।

श्री वेंकटेशाय नमः।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो नारायणाय।

युवता

मन का मर्म

- श्रीमती एस.पी.वरलक्ष्मी
मोबाइल - ०८६४४२२८०८५

मन के लिए नमन-प्रणाम -

सानुकूल भावनायें ही मन को उत्साह देते हैं। करुणरसार्णव मन संस्कार पूर्ण होता है। निर्मल मंदाकिनी की भांति हर हृदय को पवित्र करती है, आत्मीयता, प्रेम भावना सबको बांट देती है। सच्चा मनस्वी ही महान माना जाता है। मन सत्य से ही परिशुद्ध होता है। शुद्ध मन ही काम वर्णित होता है। मन के लिए यही नमस्कार।

मानव जब तक जिंदा रहता है तब तक विचारों से बाहर नहीं आ सकता। आजीवन अच्छा या बुरा कोई न कोई सोचता ही रहता है। ज्ञानांगों से सुग्राह्य पूर्वापरों को मन के हार जाँच लेना ही विचार कहा गया है। एक चीज या विषय पर मन को केंद्रित करने पर उद्भूत तरंग ही विचार है।

इसका जन्म स्थान ही मन है। इसीको चित्त-मन हृदय ऐसे कई नामों से पुकारते हैं। कल्पना के लिए, विश्लेषण के लिए अभिव्यक्ति के लिए यही केंद्र स्थान है। हमारे व्यक्तित्व एवं प्रवृत्ति, चाल चलन को निर्देश करनेवाला मन ही है।

पंच कर्मेंद्रिय, पंच ज्ञानेंद्रियों निर्देश करने की शक्ति मन को अपार है। उपनिषद वाणी है कि हमारा अतःकरण ही हमारी चालचलन को निर्णय करती है। अगर मन भ्रम में पडे तो वह चित्तं वह बुद्धि, बुद्धि के अधीन जब तक रहे तब तक उत्तमोत्तम विचारों में रहता है। अगर ऐसा नहीं हो तो विनाश की ओर जाता है।

तुम्हारे विजय को रोकनेवाले तुम्हारे प्रतिकूल विचार ही हैं। यह अब्दुल कलाम की वाणी है। मिल्टन की वाणी है कि **''स्वर्ग को नरक, नरक को स्वर्ग के रूप में परिवर्तन करने की शक्ति सिर्फ 'मन' को ही है।**

यजुर्वेद की वाणी है कि मन हमेशा सत् संकल्प करते रहना चाहिये। ज्ञान साधना, आलोचनालोचनम, आत्मशक्ति के आधार हृदय ही है। धीरज के लिए सोपान-दक्षता का निर्वचन व्यवहार के लिए मार्गदर्शी मन ही है। मन से हमेशा सानुकूल सौरभ ही प्रस्फुटित होना चाहिये। यह स्वामी विवेकानंद की वाणी है।

भगवान रमण महर्षि की वाणी है कि मन को जीतने से सभी विषयों पर विजय मिलता है। तुम्हारी आध्यात्मिक चिंतन एवं अनुभूतियों के लिए तुम्हारा मन ही साक्षी है। पवित्र मन ही परमात्मा का मंदिर है। चंचल चित्त झूले की भांति डोलायमान में रहता है। उसे पकड कर एकाग्रता में रखें तो ध्यान केलिए उपयुक्त होता है। तब लक्ष्य सिद्धि के लिए चित्तशुद्धि पूर्ण रूप से सहयोग देती है।

सर्व प्रथम मानव को समझने के लिए मन के बारे में सोचना चाहिये। दूसरों के मन को समझना बहुत मुश्किल की बात है। उनके बारे में समझने के बाद ही उनसे संदर्भ के अनुसार-विषयानुसार बात-चीत कर सकते हैं। दूसरों के मन के बारे में बिना समझ अपने मतानुसार संदर्भ शुद्धि के बिना संभाषण करना सिर्फ अविवेक ही नहीं बल्कि आपत्ति जनक है।

आनंद-संतोष-संताप-उत्साह ये सब मन से ही उद्भूत हैं, पर मन काम, क्रोधादि विकारों से प्रभावित

न होना चाहिये। योग शास्त्र की वाणी है कि मनोस्वाधीनता के रुकावट देनेवाले विचारों को तीव्र स्तर से उनके विरुध्यायी विचारों का आह्वान करना चाहिये। गीताचार्य ने कहा कि अभ्यास एवं विराग से मन को स्वाधीन कर सकते हैं। यह विषय अर्जुन के द्वारा दुनियाँ को दिया गया संदेश है। हमारे मन पर हमारे खाद्य पदार्थों का प्रभाव जरूर रहता है।

सत्व, रज, तमो गुणों में उत्तमोत्तम सत्व गुण की अभिवृद्धि करनेवाली केवल शाकाहार ही है। इच्छायें, अत्याशय मन से ही निकलते है। अतः उनको रोकना अत्यंत आवश्यक है।

कौन सा मन ज्ञान साधन के लिए योग्य हैं? और कौन विचार एवं आलोचना शक्ति की श्रीवृद्धि करती, कौन आत्म शक्ति के लिए निलय है ऐसे मन में सदा शुभ संकल्प का उदय हो, यह यजुर्वेद की वाणी है।

अरविंद की वाणी है कि इच्छाओं को कम करते रहने से ही मन निर्मल रहता है। श्रवणम्, पठनम्, चित्त शुद्धि के लिए उपयोग सत्संग हैं। ये दोनों चित्त चांचल्य को दूर करते हैं। जब 'मन' कष्ट-सुखों को समान रूप से भावना करता है, प्रसन्नता से ही रहता है।

वेमना का प्रभू है कि चित्त की शुद्धि के बिना पूजा क्या पुण्य है? कार्यसिद्धि के लिए चित्त शुद्धि प्रधान है उससे उद्भूत आत्म विश्वास के लिए मेहनत भी सहयोग देती है तो हमारे विजय को कोई नहीं रोक सकते। जितेंद्रिय ही मन को अपने वश में रख सकता है। स्थितप्रज्ञ का मन हमेशा प्रसन्नता से ही रहता है। यह आदिशंकर की वाणी है कि देहरूपी तरकस में रामबाण है 'मन' - यही, मन का मंत्रि है, ये निगूढ रहस्य है।

तिरुमल में दर्शनीय क्षेत्र

स्वामिपुष्करिणी : मंदिर के निकट स्थित यह तालाब अतिपवित्र है। यात्री मंदिर में प्रवेश करने के पूर्व इसमें स्नान करते हैं। आत्मा व शरीर की शुद्धि के लिए यहाँ स्नान करना श्रेष्ठ है।

आकाश गंगा : मंदिर की उत्तरी दिशा में लगभग ३ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

पापविनाशनम् : मंदिर की उत्तरी दिशा में ५ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

वैकुंठ तीर्थ : मंदिर की ईशान दिशा में लगभग ३ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

तुम्बुरु तीर्थ : मंदिर की उत्तरी दिशा में १६ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

भूगर्भ तोरण (शिलातोरण) : यह अपूर्व भूगर्भ शिलातोरण मंदिर की उत्तरी दिशा में १ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

ति.ति.दे. बगीचे : देवस्थान के आध्वर्य में सुंदर व आकर्षक बगीचे लगे हुए हैं, जिन में विशिष्ट पेड व पौधे मिलते हैं।

आस्थान मंडप (सदस हाल) : यहाँ धर्म प्रचार परिषद् के आध्वर्य में धार्मिक कार्यक्रम मनाया जाते हैं। जैसे भाषण, संगीत-गोष्ठी, हरिकथा-गान एवं भजन।

श्री वेंकटेश्वर ध्यान ज्ञान मंदिर (एस.वी. म्यूजियम्) : इस कलात्मक सुंदर भवन में एक म्यूजियम्, ध्यान केंद्र तथा छायाचित्र-प्रदर्शिनी आयोजित है।

ध्यान केंद्र : तिरुमल के एस.वी. म्यूजियम् एवं वैभवोत्सव मंडप में स्थित ध्यान केंद्रों में भगवान पर ध्यान केंद्रित कर भक्त शांति को प्राप्त कर सकते हैं।

(गतांक से)

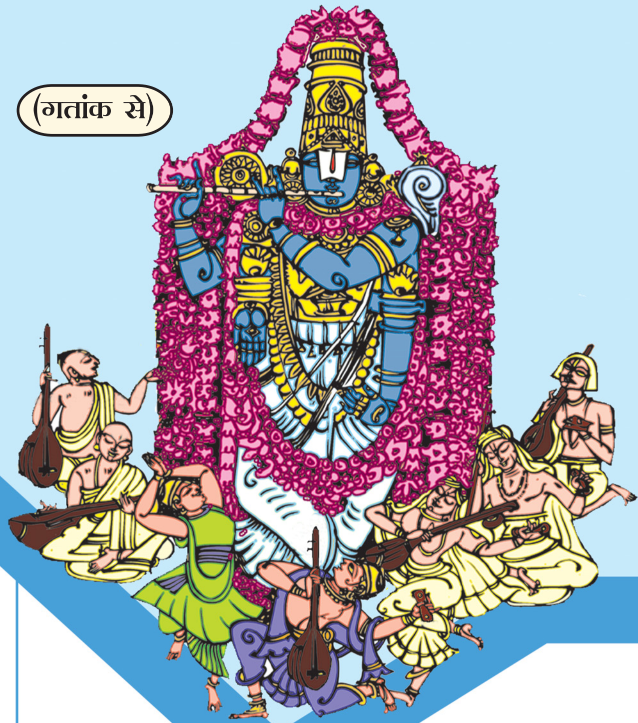

हरिदास वाङ्मय में श्रीवेंकटाचलाधीश

तेलुगु मूल - श्री एस.नागराजाचार्युलु

हिन्दी अनुवाद - डॉ.एम.आर.राजेश्वरी
मोबाइल - ९४९०९२४६१८

"उरगगिरि अरसु निम्मचरणगळु कंडम्येले उरगकरिव्याघ्रसिंह।

अरसचोराग्नि वृश्चिक मोदलाद परिपरिय बहुलभयवु।

परम विषलंपटदोलगेना सिगदंते करुणि सुवुदोलिदुदयय

स्मरगधिकलावण्य तंदे पुरंदर विठल शरणजन करुणार्णव देव।।"

उरगिरि के स्वामी हो तुम! उरग, करि, शेर, सिंह, राजा, चोर, अग्नि, बिच्छू आदि से जो भय उत्पन्न होता है, वह तुम्हारे चरण कमलों को देखने के बाद दूर हो गया। विषय-वासना, चर्मसुखादि लंपट से बचाने का दायित्व तुम्हीं पर है। हे रक्षक! मन्मथ से भी बढ़कर लावण्य वर्चस्व से संपन्न हे स्वामी! पुरंदर विठल! हम शरणार्थियों पर करुणावृष्टि बरसाने वाले देवता तुम ही हो!

"इंदु नानेनु सुकृतवमाडिदेनो
मंगलमहिम वेंकट बंद मनेगे"

नौ चरणों से युक्त इस संकीर्तन को देखेंगे, तो समस्त आभूषणों से सुअलंकृत स्वामी का गरुड़ पर आरूढ़ होकर संचार करने का शब्ददृश्य हमें ब्रह्मोत्सव के गरुड़ोत्सव को याद दिलाता है।

भक्तिमार्ग में चलनेवाला साधक भगवान के तत्त्व को माहात्म्य ज्ञान पूर्वक ढंग से जानकारी लेता है। यह एक भक्ति मार्ग का एक लक्षण होता है। इस लक्षण को आत्सात करके पुरंदरदास ने श्रीनिवास के बारे में जाना तथा देखा। उसको स्वयमेव अनुभव करके, पाठकों तथा श्रोताओं को उसका अनुभव कराके, यह बताते हैं कि मैं तुम पर विश्वास करता हूँ स्वामी, हे श्रीनिवास! मेरी रक्षा करो। दासों के लिए श्रीनिवास भगवान सर्वश्रेष्ठ, अपरवासुदेव ही हैं। त्रेता के श्रीरामचंद्र स्वामी ही आज त्रैलोक्य रक्षक बनकर श्री वेंकटेश्वर स्वामी के रूप में इस वेंकटाद्रि पर विराजमान हैं।

"निन्नने नंबिदे नीरजनयन। एन्न पालिसो इंदिर रमणा।

गौतम मुनिय शापदलि अहल्येयु। पथदोलु शिलेयागि मलगिरलु।

पतितपावन निन्न पादसोकि सतियागि। अतिशयदि भक्तर कायद नेंबुदकेलि।"

गौतम मुनि के शाप के कारण, रास्ते में शिला/चट्टान बनकर पडी हुई है। मैंने सुना था कि तुम्हारे चरणस्पर्श से अहल्या का शाप मोचन हुआ और वह सामान्य नारी का रूप धारण कर गई। इस गाथा को

सुनकर, तुम्हें उसी राम के रूप में मान कर मैं तुम पर विश्वास करता हूँ। हे नीरजनयन! हे इंदिरारमण! मेरा उद्धार करो स्वामी!

"सुरनरलोकदिपुण्यद जनरन्नु पोरेयबेकेंदु वैकुण्ठदिंद सिरिसहितदिबंदु शेषाचलदिनिंदु करुण श्री पुरंदर विठल नेंबुदकेलि।।"

(मैंने यह जाना कि सुर तथा नरलोक के पुण्यजीवियों के उद्धार के लिए तुम लक्ष्मीदेवी के साथ वैकुंठ को छोड़कर सीधे इस शेषपर्वत पर आ उतरे। मैंने यह भी जान लिया कि तुम ही करुर्द्रहृदयी पुरंदर विठल हो।)

पुरंदरदास जी का जन्म श्रीनिवास के अनुग्रह से होने के कारण उनके पूर्णानुग्रह से पूर्णभक्त होकर, पुरंदरदास श्रीनिवास भगवान का दर्शन प्राप्त करने के इच्छुक बने थे। कालक्रम में जब पुरंदरदासजी अन्यान्य कारणों से सुदूर ग्रामों में पहुँच जाते, तब श्रीनिवास की दर्शन प्राप्ति में देरी के कारण विरह से विह्वल हो उठते थे। स्वामी के दर्शन से ही उनको वास्तविक आनंद मिलता था। किसी समय को जब वे उद्विग्न हुए, तब उन्होंने ऐसा कहा-

"ई जीवविड्डु फलवेनु/ चेलुव/ राजीवलोचनन
नेनेयद (नोडद) पापितनु विनलि।।"

(कमलदलायताक्षी श्रीवेंकटेश्वर का नामस्मरण बगैर किये, बगैर दर्शन पाये, इस पापी के शरीर में प्राण के रहने से क्या ही प्रयोजन रहा गया?)

"उरगाद्रियलि चंद्र पुष्करिणी मोदलाद /
परिपरि तीर्थदलि मुणुगि मुणुगि।
तिरुवेंगलप्पसिरि पुरंदर विठलन कण्णिनलिनोड /
लरियद पापि कपटतनु विनलि।"

(उरगाद्रि में स्थित पुष्करिणी तथा अन्य श्रेष्ठ तीर्थों में बगैर स्नान किये, वहाँ उपस्थित तिरुवेंगलाधीश श्री पुरंदर विठल का दर्शन किये बगैर, इस देह में प्राण को रहने देने से क्या ही प्रयोजन साबित होगा?)

स्वामी के दर्शन प्राप्ति जब नहीं संभव हुई, तब बेचैन होनेवाले पुरंदरदास, स्वामी दर्शन के उपरांत आनंदोत्साह से उछलते हैं।

"निन्ननोडि धन्यनादेनो हे श्रीनिवास।
निन्न नोडि धन्यनादे एन्नमनो नयनकीग।
इन्नु दयमाडु सुप्रसन्न स्वामी श्रीनिवास।"

(तुम्हारा दर्शन पाकर, मैं धन्य हुआ, मेरे मन से, दृगों (मनोचक्षु) से तुम्हें देखकर मैं तर गया। मुझ पर दयावृष्टि बरसाओ, हे स्वामी मेरा उद्धार करो भगवान।)

"पक्षिवाहन लक्ष्मीरमण लक्ष्मी निन्न वक्षदल्लि

रक्षक शिक्षक दक्ष पांडव पक्ष कमलाक्ष रक्षिसु करुणिशु।"

(हे पक्षिवाहनारूढ़ लक्ष्मीपति! तुम्हारे वक्षःस्थल में मुझे लक्ष्मी देवी का दर्शन हुआ। तुम रक्षक हो, दण्ड देनेवाले हो, दक्षता के रूप हो, पांडवों के पक्षधर हो, हे कमलायताक्षा स्वामी! मुझ पर, इस दीन पर करुणावृष्टि बरसाओ।)

"देशदेश तिरुगिनानु आशेबद्धनादे स्वामी
दासनल्ल वेनो जग। दीश। श्रीश श्रीनिवास।।"

(अन्यान्य देशों में मैं घू-घूमकर आया। तुम्हें पाने की बड़ी इच्छा के साथ घूमा। हे भगवान! मैं तुम्हारा दास हूँ, हे जगदीश! श्रियः पति! श्रीनिवास! मेरी रक्षा करो।)

"कन्तु जनक केलु एन्न अंतरंगद आसेयन्नु
अंतरविल्लदे पालिसय्या। श्रीकांत श्रीनिवास पुरंदर विठला।"

('हे मन्मथ के जनक! मेरे अंतरंग से उत्पन्न मिन्नतों को सुनकर, मुझे अज्ञेय अपरिचित मानकर, मुझ पर दया बरसाओ हे श्रीकांत! श्रीनिवास! पुरंदरविठल।')

"स्नेहू भक्तिरिति प्रोक्तः"- मध्वाचार्य जी के सिद्धांत की उक्ति है कि ज्ञान से संपन्न मित्रता ही भक्ति है। इसी को आधार बनाकर श्रीनिवास के प्रति के सखा भक्ति पर व्याजनिंदा स्तुति भी किया गया है -

“तिरिदुंबदासर कैलि कप्पवगोम्बे
गरुड गमन निन्नि चरियनरिये।
धोरे पुरंदर विठल निन्न न्नु नंबिदरे
तिरुपेयु हुट्टलोल्लिदु केलोहरिये
आरुबदुकि दरय्य हरिनिन्न नंबि
तोरो ईजगदोलगे ओब्बरनुकाणे।।”

(सभी भक्तगण तुम्हें ऐसा मानते हैं कि तुम सर्वसंग परित्यागी हो, तुम ही उनके लिए सब कुछ हो। ऐसे भक्तों से दिये जाने वाले भेंट, मनौतियाँ तुम स्वीकार कर रहे हो। जिन्होंने दूसरों से माँगी चीजों को तुम्हें समर्पित करते हैं, तुम उनका हरण कर रहे हो। (यस्यानुग्रहमिच्छामि तस्यवित्तम् हराम्यहं) हे स्वामी! तुम पर विश्वास करके जीने वाले लोग इस विश्व में कोई नहीं है। अगर उदाहरण देने पड़ गये तो ताम्रध्वज के पिता, भृगुमुनि, त्रिपुरासुर की पत्नियों, कर्ण, कौरव, पूतना पर तुम्हें कितना ही अनुग्रह किया, हमें मालूम नहीं है क्या?)

‘निन्न नंबलु तिरुपेयुहुट्टलोल्लिदुकेलोहरिये’ - तुझ पर विश्वास करेंगे, तो हमें भिक्षा भी नहीं मिलेगी।

‘निन्न नंबलु मुद्दु पुरंदर विठल चिन्नक्केपुट इट्टंते अहोदोरंग’ - ‘अगर हमने तुम पर विश्वास किया तो वह सुवर्ण पर रंग पोतने के समान ही होगा।’

‘दणियनोडिदेनो वेंकटन! मन
दणियनोडिदेनु। शिखामणि तिरुमलन।।’

धनवान, सर्वसंपन्न वेंकटेश्वर स्वामी का दर्शन मैंने पाया। वे तिरुमल के शिखामणि हैं। चरणों पर नूपुर पहने हुए हैं, पीतांबर पहनकर उस पर कटिबंध बांध रखा है, सुवर्ण पदकों से सुसज्जित मालाओं को धारण किया है, ग्रीवा पर वैजयंतीमाला पहना हुआ है, उँगलियों में अंगूठियाँ तथा भुजाओं पर भुजकीर्तियाँ धारण कर, कोमल कमल की पंखुडियों जैसी आँखोंवाले हो तुम। तुम्हारे मुखमंड़ल पर स्मिति है, तेरे बाल घुंघुरुदार हैं, तुम शंख-चक्र धारी हो, हाथों में कंकण धारण करते हो, तुम शंख ध्वनि भी करते हो, अपने वरदहस्त से चरणों को दिखाकर कहते हो कि वही भूवैकुंठ है। चावल से बनी मिठाइयों को भोग के रूप में स्वीकारते हो, ब्याज के साथ पैसा वसूल करते हो, संगीत के वाद्य तथा नाद से पुलकित हो उठते हो, गंध तथा कस्तूरी के लेपन को चाहने वाले हो, पीतांबरधारी हो, तुम शिकारी हो, सृष्टि के कर्त्ता हो। - इस प्रकार मैंने श्रीनिवास को देखा, दर्शन पाया। पुरंदरदास जी के लिए श्रीनिवास ही सब कुछ हैं। सोते-जागते, उनको भगवान की दिव्यमंगल मूर्ति का ही दर्शन होता था। उसी तन्मयता में, वे जाग उठते तथा उनके आस-पास के सभी लोगों को स्वामी के सौंदर्य का वर्णन करके तृप्त होते थे।

‘कनसु कंडेने मनदल्लि कलवल गोंडेने।
एनुहेललि तंगि तिम्मय्यन पादवनु कंडे।।’

“(मैंने एक सुस्वप्न देखा, मन से उनकी कलाओं को पहचान। मैंने उनके चरण कमलों को देखा, उनका वर्णन असंभव है। आपाद मस्तक मंगल मूर्ति के सौंदर्य का वर्णन इससे पहलेवाले कीर्तन में भव्य रूप से पद कवि ने किया।)”

पुरंदरदास ने अनेक बार स्वामी का दर्शन पाते हैं। इसलिए वे ‘कंडेना कनसिनलिगोविंदन’ के द्वारा उपर्युक्त गीत में वर्णन किया। गीतकार ने कई बार माता या पिता जिस भांति वात्सल्यतापूर्वक अपने लाड़ले बच्चे को बुलाते हैं, जिस प्रकार यशोदा मैया ने गोकुल में बालकृष्ण को बुलाया, उसी भांति श्रीनिवास को ‘ओडि बारय्य वेंकटपति निन्न नोडुवे मनदणिय’ कहते हैं। इसका अर्थ- ‘हे वेंकटपति! दौड-दौड़कर आओ!’ जिस भांति गोकुल में श्रीकृष्ण ने नूपुर के नाद पर नाचा, उसी भांति आओ! नृत्य करो। पदरचनाकार यह भी कहकर स्वामी को लुभाते हैं कि मैं तुम्हें खाने के लिए बहुत सारे पदार्थ दूँगा। रचनाकार यह भी कहकर स्वामी की स्तुति करते हैं कि हे स्वामी! तुम ही इस पृथ्वी के दीनों पर कृपावृष्टि बरसानेवाले स्वामी हो। आनंद भैरवी राग में एक गीत लिखा है।

क्रमशः

(गतांक से)

मंगलाशासन पाशुरम्

तमिल मूल - श्री टी.के.वी.एन. सुदर्शनाचार्या

हिन्दी अनुवाद - श्री के.रामनाथन
मोबाइल - ९४४३३२२२०२

उलगम् उण्ड पेरुवाया उलप्पु इल् कीर्ति अम्माने
निलवुम् सुडर् सूळ् ओळि मूर्ति नेडियोय
अडियेन् आरुयिरे
तिलदम् उलगुक्कु आया निन्ड्र तिरुवेंगडत्तु एम् पेरुमाने
कुल तोल् अडियेन उन् पादम कूडडुम् आरु कूरायो॥
(३३२६)

कठिन शब्दार्थ - उलगम्-भूमि, उलप्पु इल् कीर्ति-पवित्र कीर्ति, सुडर-प्रकाश, अडियेन-दास, तिलदम-तिलक, पादम-चरण

भावार्थ - हे भगवान, आपने महा प्रलय के समय करुणा दिल से इस भूमि को अपने पेट में सुरक्षित रखा। आप तो असीमित वात्सल्य, स्वामित्व, कारुण्य जैसे दिव्य कल्याण गुणकारी हैं। हे अनश्वर और पवित्र कीर्तिवान भगवान, आप तो निरंतर रहने वाले प्रकाश से भरपूर मूर्ति हैं। हे प्रकाशमान और महान रूप वाले प्रभु, आप तो इस संसार के तिलक बराबर शोभित तिरुवेंकट गिरि में विराजित हैं। आप मेरे इस दास के लिए प्राण बराबर हैं। दास्य कुल में जनमें मुझे आपके पवित्र चरण की प्राप्ति का मार्ग बताने की कृपा कीजिए।

मतलब यह है कि भगवान विष्णु अपनी असीमित शक्ति से सारे संसार की रक्षा करने वाले हैं। उनका रूप अपनी चमक से अंधकार को भगा देता है। ऐसे महान भगवान तिरुवेंकट गिरि में निवास करते हैं। उन पर दास्य भाव रखने वाले को उनके चरण की प्राप्ति होगी।

कूराय नीराय् निलन् आकि कोडु वल् असुरर् कुलम्
एल्लाम्
सीरा एरियुम् तिनेमी वलवा देय्व कोमाने
सेरार् सुनै तामरै सेन्ती मलरुम् तिरुवेंगडत्ताने
आरा अन्बिल् अडियेन् उन् अडिसेर् वण्णम् अरुळायो।
(३३२७)

कठिन शब्दार्थ - असुरर् कुलम-असलु कुल, तिरुनेमी-सुदर्शन चक्र, तामरे-कमल, सेन्ती-लाल आग, अडियेन-दास, अडि-चरण, अरुळडाये-दया करे

भावार्थ - हे भगवान आप प्रकशमान और सुन्दर रूप के सुदर्शन चक्र को अपने दाहिने हाथ में धारण किए हैं। आप ने तो उस चक्र से क्रूर और बलशाली असुरों के दल को पूर्ण रूप से मिटाकर राख करके मिट्टी में मिला दिया। आप देवगणों के नेता हैं।

आप तो पंक भरे स्त्रोत में विकसित होकर आग बराबर चमकते पंकजों से भरे तिरुवेंकट गिरि में विराजित हैं। आप पर असिम प्रेम करने वाले इस दास को अपने पवित्र चरण की प्राप्ति का मार्ग बताने की कृपा कीजिए।

मतलब यह है कि भगवान विष्णु अपने सुदर्शन चक्र के बल से अत्याचारी राक्षसों को मारकर अपने भक्तों की रक्षा करने वाले हैं। याने वे अपने भक्तों के सारे दु:खों को मिटाने वाले हैं।

वे बहते स्त्रोत में सुन्दर लाल कमल विकसित तिरुवेंकट गिरि में निवास करते हैं। वे अपने सच्चे भक्तों को उनके चरण की प्राप्ति का मार्ग बताएँगे।

वण्णम् अरुळ् कोळ् अणिमेग वण्णा माय अम्माने
एण्णम् पुगुन्दु तित्तिक्कुम् अमुदे इमैयोर् अदिपतिये
तेण्णल् अरुवी मणि पोन् मुत्तु अलैक्कुम् तिरुवेंगडत्ताने
अण्णले उन् अडि सेर अडियेर्कु आ आ एन्नाये।। (३३२८)

कठिन शब्दार्थ - मेग वण्णन-बादल के रंग वाले, अमुदे-अमृत, इमैयोर्-देव गण, अरुवी-झरना, पोन-सोना, मुत्तु-मोती, अलैक्कुम्-बहाते

भावार्थ - हे भगवान आप का रंग तो उस काले बादल के बराबर हैं। आपके सुन्दर रंग-रूप को देखकर सब का मन मोहित हो उठता है।

आप अपने सारे भक्तों को अपनी महान लीला से आश्चर्य को प्रदान करने वाले हैं।

आप अपने भक्तों के मन में स्थान पाकर अमृत बराबर मधुरता देने वाले हैं। आप देवगणों के नेता हैं।

साफ जल को प्रवाहित करने वाले झरने मणि, सोना और मोती को साथ लेकर आते तिरुवेंकट गिरि में आप विराजित हैं।

हे भगवान, आप पर पवित्र प्रेम करने वाले इस दास को अपने पवित्र चरण की प्राप्ति का मार्ग बताने की कृपा कीजिए।

मतलब यह है कि भगवान विष्णु का रंग तो काले बादल जैसा है, उनके भक्त तो उनके रूप-रंग पर एकदम मोहित हो जाते हैं।

वे अपने भक्तों को अमृत की मधुरता प्रदान करते हैं। तिरुवेंकट गिरि में रहने वाले वे अपने भक्तों को उनके चरण की प्राप्ति की कृपा करेंगे।

क्रमशः

द्रुपद महाराज के पास जाऊँ तो वह एक गाय देगा। सोचा कि गाय को ले आकर बच्चे को बचा सकते हैं। उन्होंने द्रुपद महाराज के पास गया। बचपन में ही राज्य मिलने के कारण द्रुपद महाराज अब ज्यादा अहंकारी बन गया। वह अपने दोस्त को देखकर भी बात नहीं की। बात नहीं करना एक विषय है तो उनको दोस्त! का संबोधन सुनते ही उन्होंने कहा कि- ''तुम्हारा और मेरा दोस्ती क्या है? तुम तो भिखारी हो! मैं महाराज हूँ हमारा दोनों का दोस्ती क्या है?'' द्रुपद ऐसा कहते ही द्रोण के मन में कहीं राजसारश एक है। यह साधारण रूप से अरण्य में तप करने वाले अपमान के बारे में नहीं सोचते हैं। ऐसी बातों को वे ख्याल नहीं करते। लेकिन एक छोटी सी चिंगारी, राजसकणिक, एक छोटी सी चिंगारी एक बार जल गया। जलने से द्रोण शपथ किया कि- ''किसी भी तरह तुम्हारा समान बनकर तुम्हारी असली जोडी बनाकर तुमसे दोस्ती करूँगा।''

उसने जानलिया कि भीष्माचार्य, पाण्डवों तथा कौरवों के लिए एक गुरु की तलाश कर रहे है। यहाँ आकर भीष्माचार्य को आकर्षित करके, पांडवों और कौरवों के गुरु बने। वे गुरु इसलिए बने ताकि विशेष रूप से किसी भी कीमत पर राजा को हरानेवाले शिष्य को तैयार कर सकें। उन्हें अच्छी शिक्षा प्रदान की। और देखा कि कौन आगे आएगा। अपने बेटे अश्वत्थामा से भी आगे अर्जुन को खडा पाया। अर्जुन का जन्म इन्द्र के अंश से हुआ था। वह सात्विक, विवेकी तथा अति विनम्र व्यक्ति था। अति विनम्र का अर्थ कपट नम्रता नहीं बल्कि पूर्ण नम्रता है। ऐसे गुणों वाले अर्जुन को वे अपने सारे शस्त्र देकर, कौरवों और पांडवों से गुरुदक्षिणा के रूप में महाराज द्रुपद को हराकर अपने चरणों में गिरा देने की इच्छा प्रकट की। यह गुरुदक्षिणा की मांग बहुत बडा विषय है। पहले कौरव गए, पर उनसे यह काम नहीं हो सका। फिर पांडव गए और महाराज द्रुपद को ले आए और उन्हें द्रोणाचार्य के चरणों में रख दिए। तब द्रोणाचार्य ने महाराज द्रुपद से कहा- तुम्हारा राज्य चला गया। अब तुम राजा नही हो। तुम्हारा राज्य मेरा हो गया। मैं तुमसे मित्रता करना चाहता हूँ, इसलिए आधा राज्य तुमको देता हूँ। अब तुम आधे राजा हो और मैं आधा राजा हूँ। दोनों सममित है, और अब मित्र बन सकते हैं। ऐसा कहने के बाद, कभी भी उन्होंने आधा राज्य लिया और नहीं पांचाल राज्य पर शासन किया। वे यहीं पर रहें, यह सब कुछ केवल उनके जिद के कारण हुआ इसके बाद महाराज द्रुपद खुद को अपमानित महसूस करने लगे। लेकिन यहाँ हमें एक बात ध्यान रखनी चाहिए। महाभारत के हर पात्र की एक विशेषता होती है। प्रत्येक चरित्र तथा हरेक भक्ति में ऐसी योग शक्ति विद्यमान होती है जिसका हम कल्पना नहीं कर सकते।

क्रमशः

अर्थ पंचक

- श्रीमती शिल्पा केशव रांदड़
मोबाइल - ९९००९२६७७३

मुमुक्षुओं के लिए जानने और आचरण करने योग्य बातें

(श्री पति के शरणागतों के लिये उपदेश ग्रन्थ से)

१) प्रपन्न शरणागतों का यही परम धर्म है कि अपने श्रीगुरु महाराज की अत्यन्त प्रेमभक्ति पूर्वक निरन्तर सेवा किया करें। ऐसी निष्कपट सेवा करे जिससे वे सदा अपने पर प्रसन्न रहें।

२) प्रसंगवश वैष्णवों के द्वारा किए गए अपमान वगैरह को भोग्य मानकर स्वस्वरूप मुमुक्षुओं को सह जाना चाहिए और उनमें पूर्ववत प्रेम बनाए रखना चाहिए।

३) भगवान के आश्रित शरणागत मुमुक्षुओं को सांसारिक या पारलौकिक चिन्ता कभी नहीं करनी चाहिए।

४) मुमुक्षुओं को परमात्मा के ही चिन्तन में सदा अपना समय बिताना चाहिए। मुमुक्षुओं को चाहिये कि वह अपने **प्राणनाथ प्यारे परमात्मा** के मिलने के लिये अनेक प्रकार से मनोरथ किया करें।

५) **'नवधा भक्ति'** को शरणागत मुमुक्षु भगवान की आज्ञा कैंकर्य मानकर किया करें। भूलकर कभी भी उसमें साधन भावना न होने पावे, क्योंकि किसी प्रकार से की हुई भगवत्सेवा में मन से भी साधन की भावना आने से शरणागति टूट जाती है।

६) मुमुक्षुओं को चाहिए कि भगवान के सब स्वरूपों से तथा सब श्रीअर्चावतार विग्रह से बहुत बढ़-चढ़कर अपने सेवा विग्रह भगवान में ज्यादा प्रेम भाव निष्ठा रखें। इस तरह करने से कुछ ही दिनों में वही सेवा का विग्रह श्रीनन्दमहल के सुख को देना आरम्भ कर देगा।

७) प्रपन्न मुमुक्षुओं को भगवान के अतिरिक्त अन्य साधनान्तरों को यानी अन्य उपायों

को जड़-मूल से उल्टी के समान त्याग करके रहना चाहिए।

८) भगवान का शरणागत मुमुक्षु यदि भगवान के निर्हेतुक कृपा के सिवा दूसरे उपाय को मन से भी अवलम्ब पकड़ना चाहे तो या शास्त्र से अविहित विषय में प्रवृत्ति करना भी चाहे तो उसकी शरणागति भंग हो जाती है।

९) प्रपन्नों को सदा-सदा विचारते रहना चाहिये कि भगवान के साथ जो हमारा **सम्बन्ध** है वही सच्चा सम्बन्ध है। परमात्मा के अतिरिक्त जितने भी सम्बन्ध हैं, ये सब अनित्य हैं।

१०) शरणागत मुमुक्षुओं को चाहिये कि सदा **अनन्य प्रयोजन** होकर रहें। इसका खुलासा अर्थ यह है कि परमपद में जाकर **श्रीकान्त की नित्यसेवा** मिलने के अतिरिक्त परमात्मा से शरणागत मुमुक्षु स्वप्न में भी अन्य चीज मिलने के लिए मन से भी प्रार्थना न करें।

११) शरणागत मुमुक्षुओं को चाहिए कि भगवान लक्ष्मीकान्त के सिवा दूसरे देवों का पूजन न करें। न तो दूसरे देवों को नमस्कार करें। न तो दूसरे देवों का ध्यान-स्मरण करें। न तो दूसरे देवों का दर्शन करने जायें। न तो दूसरे देवों की निन्दा करें।

१२) जहाँ कहीं देवतान्तरों का आराधन करके भगवान पाने का प्रसंग है अथवा भगवान को अन्तर्यामी मानकर जहाँ-जहाँ देवतान्तरों के नमस्कार का प्रसंग है, ये सब अन्य अधिकारियों के लिये है। मुमुक्षुजन के लिये नहीं।

१३) शरणागत मुमुक्षुओं को चाहिए कि अन्य देवों का भोग लगाया हुआ कुछ भी पदार्थ ने खावें। अन्य देवों का धारण कराया हुआ अत्तर, पुष्प, चन्दन, माला वगैरह भूलकर भी अपने उपयोग में न लेवें।

१४) संध्यावंदनादि कर्म निष्काम भावना से किया करें।

१५) शरणागत मुमुक्षुओं को सकाम भाव वाले कर्मों को नहीं करना चाहिए।

१६) झूठा शपथ न करें। हरिचर्चा के अतिरिक्त बिना मतलब की भली-बुरी बातें कहने-पूछने में व्यर्थ समय न बितावें।

१७) मन्त्रों के द्वारा साँप, बिच्छू वगैरह का जहर उतारना तथा मन्त्रों के द्वारा भूत, प्रेत, पिशाच आदि को छुड़ाना अथवा मन्त्रों द्वारा किसी भी रोग निवृत्ति का प्रयत्न करना, ये अनन्य शरणागत मुमुक्षुओं के लिये सक्त मना है।

१८) शरणागत मुमुक्षुओं को चाहिये कि शरीर छूटने पर्यन्त चातक पक्षियों के समान अपनी निष्ठा के ऊपर दृढ़ परिस्थिति रखता हुआ **द्वयार्थ** ही का अनुसन्धान करता हुआ समय बितावे।

१९) भगवान की **निर्हेतुक कृपा** के अतिरिक्त इतर उपायों को तथा भगवान के **कैंकर्य** के सिवाय अनित्य फलों को भगवान के अतिरिक्त इतर देवों को **निषिद्धानुष्ठान** के समान परित्याग करके रहना चाहिये।

२०) भगवान के अतिरिक्त दूसरे देवताओं का आराधन तथा उपायान्तर, प्रयोजनान्तर में प्रवृत्ति सामान्य अधिकारियों के लिये तो ठीक है, परन्तु विशेष

अधिकारी जो **शरणागत मुमुक्षु हैं**, उन लोगों के लिये तो विशेष शास्त्रों द्वारा उनकी **शरणागति निष्ठा का भञ्जक** ही बताया गया है।

२१) प्रपन्न मुमुक्षुओं को चाहिये कि भगवान तथा भागवत और गुरु इन तीनों के प्रतिकूल किसी प्रकार भी बर्ताव न करें।

२२) भगवान के शरणागत मुमुक्षुओं को चाहिये कि **भगवत्प्राप्ति** के बाबत कभी शंका न करें।

मुमुक्षुजन को पालन करने योग्य बातें श्रीमद्भगवद्गीता से

१) सम्पूर्ण भूतप्राणियों से द्वेष न करना।

२) सबके प्रति मित्रता, स्नेह का भाव रखना।

३) करुणा (दया+आत्मीयता+कृतिशीलता) रहना अहंकार का त्याग।

४) दुःख-सुख में समान भाव रखना।

५) क्षमाशील होना।

६) क्रोध से सदा दूर रहना। क्रोध से बुद्धि का नाश हो जाता है।

७) प्रत्येक स्थिति में सन्तोष भाव रखना।

८) इन्द्रियों को यत्नपूर्वक संयमित रखना।

९) दृढ़ निश्चय वाला होना।

१०) मन और बुद्धि भगवान को समर्पित किये रखना।

११) न किसी से उद्विग्न होना न किसी को उद्विग्न करना।

१२) लौकिक कारणों से हर्ष नहीं करना।

१३) दूसरों की उन्नति देखकर संताप नहीं करना।

१४) अपेक्षा (आकांक्षा, आसक्ति) नहीं होना चाहिए।

१५) बाहर-भीतर से शुद्ध होना। (अन्न शुचि, मन शुचि, अर्थ शुचि, विचार शुचि, कर्म शुचि आदि)

१६) सांसारिक व्यवहार से उदासीन रहना।

१७) किसी भी कारण से व्यथित नहीं होना।

१८) खुशी से पागल या उन्मत्त नहीं होना।

१९) शोक या चिन्ता नहीं करना।

२०) मान-अपमान में सम रहना।

२१) देहाभिमान का त्याग करना।

२२) सदा सत का संग करना असत का त्याग करना।

२३) निन्दा और स्तुति से बुद्धि का सन्तुलन नहीं टूटना।

२४) श्रेष्ठता से अभिमान का अभाव।

२५) दम्भाचरण का अभाव रहना।

२६) किसी भी प्राणी को किसी प्रकार भी न सताना।

२७) मन-वाणी आदि की सरलता रखना।

२८) अन्तःकरण की स्थिरता रखते हुए भगवान की अव्यभिचारिणी भक्ति करना।

वेदों के बारे में

- श्री वेमुनूरि राजमौलि
मोबाइल - ८९८५२३९३१३

इस संसार में एक ऐसा स्थान है, जहाँ एक समय बिल्कुल ''मत''(धर्म) नहीं था। वह है, वेद काल का भारत (प्र)देश। ''भा'' का अर्थ ''कांति'' अथवा ''प्रकाश'', ''रथ'' याने ''अंकित'' (पूरी तरह अपने को समर्पित) और ''आसक्ति'' (अनुरक्ति) है। भगवान कान्तिरूप है। ''भारत'' याने भगवान को अंकित या भगवान पर आसक्ति रखने वाला है; ऐसा इसका भाव है। वैसे भारत देश में धर्म रहित भगवत् चिन्तन मात्र व्याप्त था। वह वेद प्रतिपादित है। वेद में मत (धर्म) नहीं है। मत के बिना प्रजा प्रशान्त जीवन बिताती थी। महर्षियों के आदेश, सन्देश, प्रतिपादन ही वेद बने।

पहले तीन, बाद में चार

''वेद'' का अर्थ विद्या या ज्ञान है। पहली दशा में ''वेद'' एक ही था। इसके बाद तीन विभाग बनकर ''त्रयी-विद्या'' बना। उन विभागों के नाम ''ऋक'', ''यजुर'' और ''साम'' हैं। महाभारत के काल तक भी ''वेद'', ''त्रयी-विद्या'' के रूप में ही था। इसके पश्चात् ''अथर्व'' नामक विभाग मिल जाने से वेद के चार विभाग या शाखाएँ बने।

वेद, नैतिक मार्गदर्शकों, कर्मकाण्डों, प्रवर्तना सूत्रों का क्रोडीकरण भी है। दैनन्दिन जीवन, आध्यात्मिक अभ्यास के लिए अनेकों महर्षियों द्वारा किया गया समष्टि यत्न का फल ही वेद संपुटि है। ''वेद यति यतो धर्माधर्म इति वेदः'' धर्म और अधर्म के बारे में बताने वाली चीज वेद है।

मन्त्र... ब्राह्मण... आरण्यक... उपनिषत

वेद चार भागों में विभक्त है। वे हैं; मन्त्र, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषत। मन्त्र भाग को ''संहिता'' भी कहते हैं। ये संहिताएँ पाँच हैं। वे, ऋक संहिता, कृष्ण यजुस्संहिता, शुक्ल यजुस्संहिता और अथर्व संहिता हैं।

ब्राह्मण भी पाँच हैं। वे ऐतरेय ब्राह्मण, तैत्तिरीय ब्राह्मण। शतपथ ब्राह्मण, षड्विंश ब्राह्मण और गोपथ ब्राह्मण हैं।

मन्त्र के अनेकों अर्थ हैं। यज्ञ संपन्न करने वालों के मुख से निसृत शब्द समूह ही मन्त्र हैं। मन्त्रों को ''ऋक, यजुस, साम'' कहते हैं। ऋक माने स्तुतियाँ, दैव प्रार्थनाएँ हैं। इन्हें ''सूक्त'' कहा जाता है। सारा वेद-साहित्य मन्त्रों से भरा है। मन्त्र अथवा संहिता के विवरण ''ब्राह्मण'' हैं। यज्ञ-निर्वहण का विधान ब्राह्मण बताते हैं।

ऋक एवं ब्राह्मण कर्म-काण्ड से संबंधित हैं। मन्त्र, ब्राह्मण शाखाओं के पश्चात् आरण्यक रहते हैं। आरण्यक, सिर्फ दो ही हैं। वे, ऐतरेयारण्यक, तैत्तरीयारण्यक हैं। आरण्यक वैराग्य का उपदेश देते हैं। वानप्रस्थाश्रम में जंगलों में(अरण्य में) अध्ययन करने से वे आरण्यक कहलाये। अन्तिम समन्वय (सिंथसिस) उपनिषतों में मिलता है।

उपनिषत, आध्यात्मिकता की ओर ले जाते हैं। इसलिए उन्हें ''ब्रह्मकाण्ड'' कहा गया। उपनिषत एक सौ आठ होने पर भी मौलिक रूप से दस ही उपनिषत मुख्य हैं। आदिशंकराचार्य जी ने मात्र दशोपनिषतों के ही भाष्य लिखे। वे हैं, ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरि, ऐतरेय, छान्दोग्य और बृहदारण्यक। इन सब का मिलन ही ''वेदवाङ्मय'' है।

यह वेद कब का

हम अब तक ठीक तरह से वेद का मूल और काल जान नहीं पा सके। अभी वादोपवाद चल ही रहे हैं। किन्तु वेद जीवनदी बनकर, भारत पार कर के, संसार भर में बह गया। जीनस से सत्रह शताब्द पहले ही वेद, अरेबिया पहुँचा। हिब्रू भाषा में प्राप्त होनेवाले ''पुराने स्टेटमेंट'' में वेद की साहित्य-शैली एवं भाव दृष्टि गोचर होते हैं; ऐसा विन्सेंट ए.स्मित नामक परिशीलक बता रहा है। वेद को दृष्टि में रख कर महम्मद नबी के पूर्व, आज से २४०० वर्ष पहले जीवित अरबी कवि एवं दार्शनिक लबीब ने ऐसा कहा - ''हे! आशिष प्राप्त हिन्दू भूमि! तुम गौरव प्राप्त करने योग्य हो; क्यों कि तुम में ईश्वर ने असली ज्ञान प्रकट किया।'' परिशीलकों ने निर्धारित किया कि ''विश्व-ग्रन्थ-भाण्डागार'' में प्रथम ग्रन्थ वेद है; ऐसा परिशीलकों ने निर्धारित किया। इसे हमको ग्रहण करना होगा।

कइयों आधुनिक भाव

'वेद' का प्रथम अक्षर ''अ'' है। भारत-भूमि पर विलसित सारे तात्त्विक, सात्त्विक रचनाओं का आधार ''वेद'' ही हैं। हम उन रचनाओं को ''फिलासफी'' नहीं कहना चाहिए। वास्तविक विद्या के दर्शन करने में हेतुवादिता और तार्किकता का उपयोग किया जाता है। वह ''फिलासफी'' कहलाता है। किन्तु हमारी रचनाएँ वेद-जनित हैं। अतः वे फिलासफी की नहीं होती।

''वसुधैक कुटुंबकं'' (पृथ्वी एक छोटा सा परिवार है); ऐसी विश्व-भावना संसार के वाङ्मय में पहली बार वेद से ही निकल पड़ी। शक्ति-केन्द्रों जैसे अनेकों देवता, वेद में दिखायी देने पर भी ''परम पुरुष'' एक ही है (तस्मात्सर्वैरपि परमेश्वर एव हूयते!); ऐसा वेद ने ही पहली बार मानवालि को बताया। जो सभी प्राणियों को अपने में और सभी प्राणियों में अपने को देखते हैं, वे ऐसे लोग होते हैं, जिनमें विद्वेश नहीं रहता (यस्तु सर्वाणि भूतानि आत्मन्येवानु पश्यति, सर्व भूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते); ऐसा मानव जाति को पहली बार बता कर, सर्व-जीव-सामरस्यता को वेद ने ही निर्देशित किया। अनेकों सार्वकालिक, सार्वजनीन सत्य, वेद से ही उद्भव होकर संसार भर में व्याप्त हुए।

''समाज से प्रेम करो; उसका आदर करो; क्षुधार्थियों की रक्षा करो''- ऐसी बात वेद ने ही मानवालि को सिखायी। वर्ण, लिंग विवक्षा रहित समाज को वेद ने निर्देशित किया। वेद में एक वधु अपने वर से कहती है- मैं ऋक(साहित्य) हूँ और तुम साम (गान) हो। स्त्री-पुरुषों का संबंध कैसा होना चाहिए, यहाँ वेद ने बताया। एक और जगह एक स्त्री कहती है कि ''मैं शिर हूँ; मैं झंडा (पताका) हूँ; मैं आग जैसी बातें (कठोर शब्द) करती हूँ; मेरे पति को मुझे अनुसरन करने दो।'' यहाँ स्त्री की स्वेच्छा, आत्म विश्वास, स्वाभिमान व्यक्त होते हैं। हे विश्वास! ''हमें विश्वास प्रदान करो; भय से विमुक्ति दो; हमें अपार संपत्ति के अधिपति बनाओं; श्रेष्ठ ज्ञान प्रदान करो''- ऐसा वेद हमें परमात्मा से पुछवाता है।

परमात्मा हमारी रक्षा करे; हमारा पोषण करे; हम शिक्षाओं (विद्याओं में) सामर्थ्य प्राप्त हो जाय; हम तेजस्वियों को ब्रह्म-विद्या अवगत हो जाय; आपस में विद्वेश उत्पन्न न हो जाय (ॐ सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहै। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।) ऐसा वेद हमसे प्रार्थना करवाता है। वेद को श्रुति भी कहते हैं। हमें यह मालूम ही है कि गान की एक श्रुति होती है; गान श्रुति में ही होना चाहिए। हमारा जीवन-गान, श्रुति में ही आगे बढता जाय। हमें श्रुति में मिलना होगा। हम वेदों में जाय और सत्य वचनों का आस्वादन करें।

अपार औषध गुणों से युक्त बबूल

तेलुगु मूल - डॉ.सी.मधुसूदन शर्मा

हिन्दी अनुवाद - डॉ.एस.हरि
मोबाइल - ९३९८४५४१६८

गाँव, शहर व नगर भेद के बिना सभी प्रांतों में बढनेवाला औषधीय वृक्ष बबूल। इसे काला बबूल का पेड भी कहते हैं। तेलुगु में यह कहावत प्रचलित है कि ''बबूल और माँ न रहनेवाला गाँव ही नहीं रहता।''

संस्कृत में बब्बूल नाम से, अंग्रेजी में बबुल इंडियन अरबिक ट्री नाम से, हिंदी में बबूल नाम से अभिहित किया जाता है। मैमोसेसि नामक वृक्ष परिवार से संबंधित इसका शास्त्रीय नाम अकेषिया अरबिक। यह पेड शमी पत्ते जैसे पत्ते होकर नोकदार जुगुल काँटों से युक्त होता है। यह पीले रंग के फूल, भूरे रंग के लंबे फलों से भरा रहता है। सुखाया हुआ बबूल का गोंद, बाबूल की छाले का चूर्ण किराणें की दुकानों व आयुर्वेदिक औषध विक्रयशालाओं में सालभर मिलते हैं।

बबूल पेड के पत्ते, फल, छाल, गोंद (गम) आदि सब औषध के रूप में उपयोग होते हैं। हम दैनिक जीवन में सामना करने वाली विविध प्रकार की अस्वस्थ समस्याओं के लिए इन्हें औषध के रूप में कैसे उपयोग किया जा सकता है? 'अब हम पता लगायेंगे।'

बबूल के गोंद को घी में डालकर भूबकरनें, उबालकर, ठंडाकर, चूर्ण बनाकर औषध के रूप में उपयोग करना है।

अधिक ऋतुस्राव :

रोजान सुबह-शाम हर वक्त २-३ ग्राम बबूल गोंद के चूर्ण को पर्याप्त मात्रा में शहद मिलाकर सेवन करते रहने से विविध कारणों से स्त्रियों में होनेवाले अधिक ऋतुस्राव कम होता है।

संतान प्राप्ति के लिए :

पुरुष हर दिन एक बार ३-५ ग्राम बबूल के गोंद को ३-४ घंटे पानी में भिगाकर, गिलाकर १०० मि.ली. पानी, आधा चम्मच ताड की मिश्री, एक चम्मच घी मिलाकर थोडा समय उबालकर उतार लें। उसे ठंडा होने के बाद सेवन करते रहने से वीर्यकणों की संख्या, गति बढ़कर संतान प्राप्ति के लिए उपयोगी होता है। वीर्यदोष, शीघ्रस्खलन जैसी समस्याएँ कम होती हैं।

पीलियों के लिए :

रोजाना रात के समय १०० मि.ली. पानी में एक चम्मच बबूल गोंद का चूर्ण, एक चम्मच जीरा डालकर सुबह छानकर रख लें। उस पानी का सेवन करते रहने से जल्दी परिणाम दिखायी देता है।

अधिक पसीने के लिए :

बबूल के पत्ते को पर्याप्त पानी में मुलायम पीसकर रख लें। उसे शरीर पर लगाकर सूख ने के बाद हड़ के चूर्ण को पानी में मिलाकर बनाया हुआ पेस्ट को लगाकर घंटे के बाद स्नान करते रहने से उस समस्या से बाहर हो सकते हैं।

बिस्तर में मूत्र विसर्जन :

बबूल गेंद का चूर्ण आयुर्वेद विक्रयशाला में मिलनेवाला नागर मोथी का चूर्ण, जटामांसी का चूर्ण

बराबर मात्रा में मिलाकर रख लें। इसे दोनों वक्त आयु के अनुरूप हर वक्त १-३ ग्राम के चूर्ण में पर्याप्त मात्रा में शहद मिलाकर सेवन करते रहना चाहिए।

दंत धावन चूर्ण :

सूखे बबूल की छाल को जलाकर बनी हुई राख ५० ग्राम, आयुर्वेदिक विक्रयशालाओं में शुभ्रव्यस्म नाम से मिलनेवाला पटिका भस्म १० ग्राम, सेंधा नमक १० ग्राम मिलाकर रख लें। इसे रोजाना एक बार दंतधावन के रूप में उपयोग करने से दाँतों पर रहने वाला दाग दूर होने के साथ-साथ दंतशूल, मसूडों के दर्द, मसूडों की सूजन, मसूडों के मवाद, रक्त स्राव जैसी मसूडों की समस्याएँ कम होती हैं।

जले घावों के लिए :

रोजाना दो बार बबूल की छाल का चूर्ण पर्याप्त नारियल के तेल में मिलाकर लेपन करते रहने से चमडा जलने से उत्पन्न जलन, दर्द, परेशानी कम होकर घाव भी बहुत जल्दी समाप्त होते हैं।

पैर के छेले के लिए :

रोजाना एक बार बबूल के गोंद को पानी में नरम पीसकर लेपन करते रहने से पाँव के छेले, पिशानी पर लगाने से सरदर्द कम होता है।

स्त्रियों में योनि स्राव, कुसुम रोगों के लिए :

कोमल बबूल के फली को पीसकर छाया में सुखाकर बनाया हुआ चूर्ण, बबूल गुड का चूर्ण बराबर मात्रा में मिलाकर रख लें। इसे सुबह-शाम हर वक्त आधे चम्मच से चम्मच तक पर्याप्त मात्रा में सेवन करते हुए पर हेज रखने से विविध के योनिश्राव, सफेद स्राव आदि समस्याएँ कम होती हैं।

कमर दर्द कम होने के लिए :

बबूल गोंद का चूर्ण, बबूल गुड का चूर्ण हर एक ५० ग्राम की मात्रा में मिलाकर रख लें। इसे सुबह-शाम हर वक्त २ ग्राम चूर्ण को ५० मि.ली. दूध मिलाकर सेवन करते रहना चाहिए। (मधुमेह के रोगी बिना बबूल गुड के) ऐसा उपयोग करने से टूटी हुई हड्डियाँ भी जल्दी चिपक जाते हैं। शरीर की माँसपेशियाँ, तंत्रिकाएँ मज़बूत होकर नीरस और ऊबन के बिना रहने के लिए सहयोग देता है।

बब्बुलारिस्टा, लवंगादिवटि जैसे प्रसिद्ध आयुर्वेद औषधों की तैयारी में भी इस बबूल का उपयोग करते हैं।

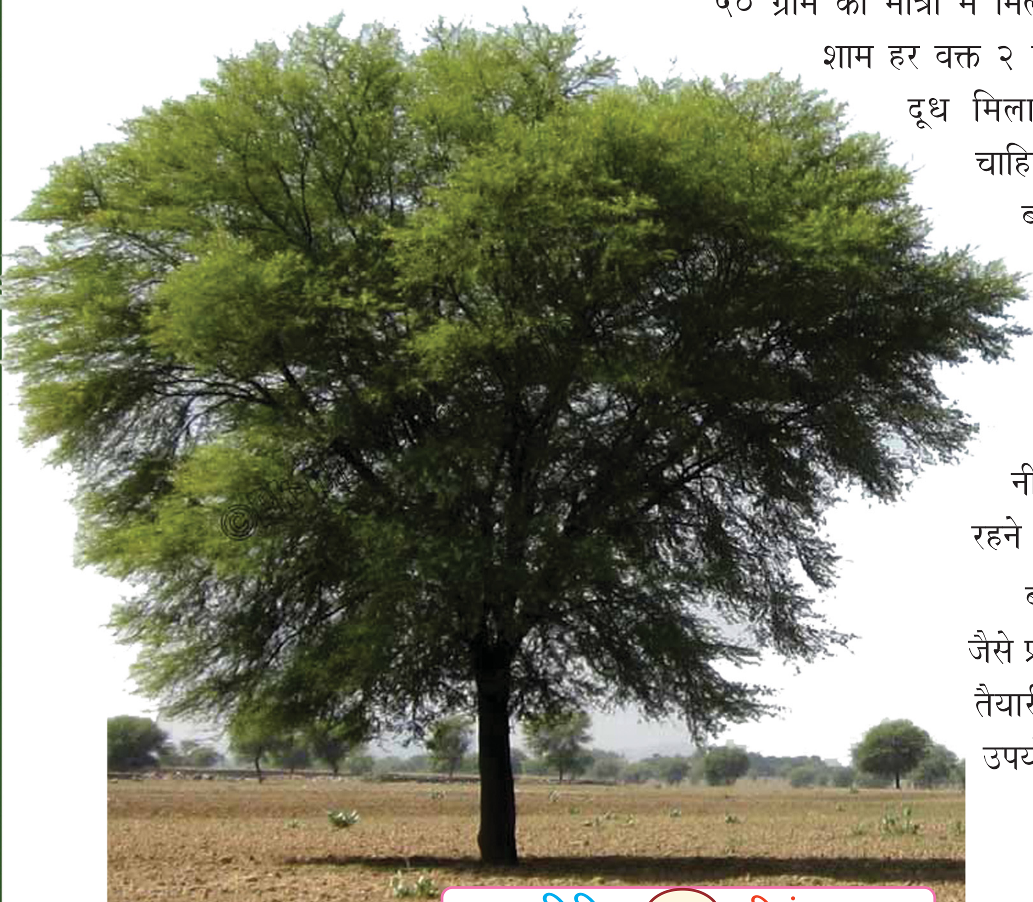

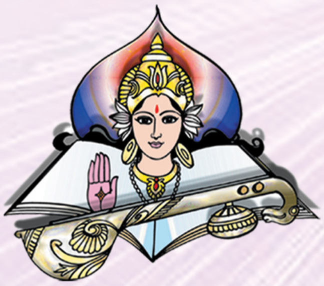

आइये, संस्कृत सीखेंगे..!!

लेखक - महामहोपाध्याय काशिकृष्णाचार्य

आयोजक - महामहोपाध्याय समुद्राल लक्ष्मणय्या

हिन्दी में निर्वहण - डॉ.सी.आदिलक्ष्मी

मोबाइल - ९९४९८७२१४९

एकादशः पाठः - ग्यारह पाठ

1. बालकः = बच्चा
2. इव = जैसा
3. स्नानं = स्नान
4. ब्राह्मणः = ब्राह्मण
5. खलु = है ना
6. स्नानानि = स्नान
7. अनुजः = भाई
8 .अहो = आभा
9. भोजनं = भोजन

प्रश्न :

1. सर्वे ब्राह्मणाः तत्र भोजनं कुर्वन्ति?
2. वयं अत्र भोजनं कुर्मः।
3. यूयं कुत्र स्नानं कुरुथ?
4. सर्वे बालकाः तत्र न सन्ति?
5. अत्र एकः अपि भोजनं न करोति।
6. सः बालकः इवास्ति ?
7. एते स्नानं कुर्वन्ति खलु।
8. न कुर्वन्ति।
9. किमर्थम्?
10. ते बालकाः इव सन्ति।

जवाब :

1. सभी ब्राह्मण वहाँ भोजन करते हैं?
2. हम यहाँ भोजन करेंगे।
3. आप कहाँ स्नान करते हैं?
4. सभी बच्चे वहाँ नहीं थे।
5. यहाँ कोई खा नहीं है।
6. वह एक लडके की तरह था?
7. क्या वे सब स्नान कर चुके थे?
8. नही कर रहा।
9. क्यों?
10. वे बच्चों की तरह हैं।

प्रश्न :

1. सभी ब्राह्मण कहाँ हैं?
2. वे नहा रहें हैं।
3. आज यहाँ क्यों?
4. कुछ नहीं।
5. कुछ बच्चे वहाँ भोजन कर रहे हैं।
6. यहाँ हम सभी स्नान कर रहा है।
7. कितने बच्चे हैं?
8. सभी बच्चे यहाँ हैं।
9. क्या तुम स्नान नहीं कर रहे हो?
10. तुम वहाँ बच्चों के रूप में क्यों खा रहे हो? आभा!

जवाब :

1. सर्वे ब्राह्मणाः कुत्रासन्?
2. ते स्नानं कुर्वन्ति।
3. अत्र अद्य किमस्ति?
4. किमपि नास्ति।
5. केचन बालकाः तत्र भोजनानि कुर्वन्ति।
6. वयं सर्वे अत्र स्नानं कुर्मः।
7. अत्र कति बालकाः सन्ति?
8. बालकाः सर्वे अत्रैव सन्ति।
9. यूयं स्नानं न कुरुथ किम्?
10. अहो! यूयं बालकवत् तत्र कुतः भोजनानि कुरुथ?

नीति कथा

गुरूजी की भेंट

- श्री सुधाकर रेड्डी, मोबाइल - ९८६६०६०२६९

सुबह की प्रार्थना के बाद, मैं अखबार पढ़ रहा था... किसी ने घंटी बजाई तो मैंने जाकर दरवाजा खोला। सामने एक युवक हाथ में शादी कार्ड लेकर मेरा अभिवादन किया, ''गुरूजी आप कैसे है?'' वृद्धावस्था की विस्मृति के कारण उनके बारे में सोचते हुए मैंने सचमुच कहा, ''ओह! मैं ठीक से हूँ। अंदर आओ बाबू।'' वह अन्दर आकर सोफे पर बैठ गया। मैं उसके सामने सोफे पर बैठकर सोच में पड गया कि वह कौन है?

शिष्टाचार के अनुसार मैंने उससे पूछा कि - ''क्या पानी चाहिए?'' उसने कहा नहीं चाहिए। उसने अपनी आवाज को समायोजित किया और पूछा कि -- ''गुरूजी! क्या आप मुझे पहचान सकते है।'' मैं विद्यासागर हूँ। आपके विद्यालय में पढ़ चुका था। मेरे पिताजी उन दिनों जिला परिषद के अध्यक्ष के रूप में काम किया करते थे। तब मुझे याद आया कि विद्यासागर बहुत अच्छा छात्र था। बहुत चालाक था। हमेशा कक्षा में प्रथम आता था। जिस दिन उसने स्कूल में उनकी भर्ती हुई। तब उनके पिता ने मुझसे मिलकर कहा कि- ''मास्टर जी! मेरी इच्छा है कि मेरे लडके अच्छी तरह पढ-लिखकर उन्नति के रास्ते पर आवे। किसी भी गलत काम या दंगे के लिए जिला परिषद के अध्यक्ष के बेटे की तरह न देखकर उसकी सजा जरूर दीजिए। मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं है। आपके प्रशिक्षण में वह अच्छी तरह से पढना, वही मेरे लिए खुशी की बात है। मेरे लिए यह घटना आश्चर्य चकित किया। इतने सारे राजनीतिज्ञों को देखा, लेकिन विद्यासागर के पिता जैसे व्यक्तियों को आमतौर पर बहुत कम ही देखा।

उन दिनों मैं प्रधानाध्यापक के तौर पर काम करता था। बच्चों को गणित और विज्ञान पढाया करता था। हालांकि, विद्यासागर ने ऐसा व्यवहार नहीं किया, जिससे दंडात्मक स्थितियाँ उत्पन्न हो। बहुत होशियारी से पढता था। किसी भी संदेह का निस्तारण कर लेता था। गणित में उनकी रुचि को देखकर मैं उसे अधिक सावधानी से पढाया करता था।

अभिवादन के बाद उसने कहा कि वह किस काम के लिए आया है। ''गुरूजी! मेरी शादी अगले महीने की पन्द्रह तारीख को, मेरे स्वस्थल में होनेवाली है। परसों शाम को यही गाँव में रिसेप्शन है।'' मेरी प्रार्थना है कि आप और माताजी (गुरूजी धर्मपत्नी) शादी के इसी अवसर पर आकर आशीर्वाद दे। आप कब निकलते है? बताने पर मैं आप दोनों को हमारे गाँव ले जाकर और वापस आने के लिए कार का इंतजाम करुँगा। ऐसा कहते हुए हाथ में शादी का कार्ड रखकर मेरे और मेरी पत्नी के पैरों की सलामी की।

मैंने बधाई पत्रा देखा। मुहूर्त मध्यरात्रि को रखा गया। मैंने उससे धीरे से कहा -- ''स्वास्थ्य की दृष्टि से यात्रा नहीं कर सकता और हो सके तो रिसेप्शन में आऊँगा।'' उसका चेहरा थोडा सिकुड गया। क्योंकि उसने उससे शादी में आने के लिए कहा था। हालांकि, वह इस वादे के साथ चला गया कि दोनों रिसेप्शन में जरूर आना चाहिए। मैंने उससे कहा था कि -- ''गाडी मत भेजा हम ही खुद आएंगे।''

शादी के दो दिन के पहले मेरी पत्नी लक्ष्मी ने मुझे रिसेप्शन के बारे में याद दिलाया और पूछा कि उपहार के रूप में क्या देना है? विद्यासागर बहुत धनी है। उसके स्तर के अनुरूप इनाम देने की ताकत मुझ में नहीं है। बहुत देर तक सोचने के बाद मैंने लक्ष्मी को अपनी मंशा बताई और वह मान गई। मैं और लक्ष्मी रिसेप्शन में गए।

मैं अपने पूर्व छात्रों से मिला जो विद्यासागर के मित्र थे। विद्यासागर के पिता ने आकर मेरा अभिवादन किया। रिसेप्शन शुरू होने के बाद मैं और लक्ष्मी दोनों मंच पर जाकर दुल्हन और दुल्हा को आशीर्वाद दिया। मैंने जो लिफाफा लेकर गया था, उसको विद्यासागर के हाथ में रखा था। उस लिफाफे में रखे हुए पत्र में ऐसा लिखा था- चिरंजीवी विद्यासागर को बधाई। तुम तो सोच रहे हो कि इस समय यह पत्र क्या है? छात्रों की उन्नति के लिए सहयोग दिए हुए अध्यापकों को ठीक से स्मरण न किए हुए इस आधुनिक काल में तुम तो याद रखकर तलाश करते हुए आकर सप्रेम से अपनी शादी के लिए आमंत्रित किया, उसी के लिए हम बहुत आनंदित हुए। वृद्धावस्था के कारण, मैं अपने किसी रिस्तेदार की शादी में आमंत्रित करने पर न जा रहा हूँ। तुम्हारे मामले में, मैंने इस प्रथा से विराम लेने का फैसला किया है। तुम तो मेरे प्यारे छात्र होने के कारण एवं आपके पिताजी पर रहे गौरव के कारण... वगैरह मैं तुमको क्या उपहार दूँ? मेरी निजी राय यह है कि हम जो उपहार देते है, वह दूसरों के लिए उपयोगी होना चाहिए।

अपनी वर्तमान वित्तीय स्थिति में इसके बारे में बहुत बहस कर रहा हूँ कि तुम को किस तरह का उपकार दिया जाए? मैंने कितना भी सोचा, पर सही चीज नहीं सूझी। मैं जो वस्तु तुम को देना चाहता तो, वह वस्तु तुम्हारे पास रही होगी। धन देना चाहता तो, तुम्हारी ताकत के अनुसार दे नहीं सकता। मुझे एसा लगता है कि मेरे द्वारा वहन की जा सकनेवाली राशि तुम्हारे लिए बहुत कम है। ऐसा सोचते-सोचते मेरे मन में एक विचार आया। इस पत्र के साथ संलग्न कागज वह उपहार है जो मैं तुम को दे रहा हूँ। हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि आप और आपकी पत्नी दोनों अपने भावी जीवन के बहुत सुख से व्यतीत करें। आशीर्वाद के साथ -- रामनाथ गुरूजी।

हम रात का भोजन (डिन्नर) करने के बाद उनके माता-पिता ने नए वस्त्र दिए। न लेने पर विद्यासागर दुखित होता है ऐसा मजबूर किया गया। उस तरह मजबूर होना हमारे लिए अच्छा नहीं लगा। न कहने पर भी हमको घर तक कार में छोडा गया।

एक महीने के बाद मेरे नाम पर एक पत्र आया। खुलने पर पता लग गया कि विद्यासागर ने लिखा था। ईश्वरीय समान गुरूजी को नमस्कार! खुशी की बात यह है कि आप मेरी शादी में आकर हम दोनों को आशीष दिए। उस दिन मेरी शादी के रिसेप्शन में आपने बेंट दिया था और उससे जुडी चिट्ठी पढकर मैं बहुत देर तक वैसा ही रह गया। तब समझ में आया कि बुद्धिजीवि क्यों खास होते हैं। आपने मेरे नाम से २००० रुपए का दान दिया और रसीद संलग्न की। मैं इस शादी में आए हुए सभी उपहारों में आपकी भेंट को सबसे मूल्यवान मानता हूँ। जब मैं स्कूल में था तब आप मेरे लिए एक आदर्श थे। बचपन से मैं दूसरों को दिलचस्पी से देख रहा हूँ। उसी तरह आप को पाठशाला में देखा रहा था। उस तरह मैं अच्छे-अच्छे विषयों के बारे में जानकारी हासिल कर ली। वे मेरे लिए इस समय इतने अच्छे स्तर पर ले जाने में मददमार रहे हैं। लेकिन आपके उपहार ने मुझे सोचने पर मजबूर कर दिया। आमतौर पर मेरे लिए २००० रूपए बहुत छोटी रकम होती है। लेकिन आपने वह राशि मेरे नाम पर एक अनाथालय को दान कर दी। आपने जो यह महान कार्य किया है, उससे मुझमें अनेक विचार जगाएँ हैं। अनेक बार मुझे अपने द्वारा किए गए अनावश्यक खर्चों की याद दिलाई गई। आपने मुझे जो उपहार दिया है, मैंने उसका अनुकरण किया है।

हमारे चचेरे भाई की शादी मेरी शादी के तीन दिन बाद हुई। उसके पास असंख्य धन है। इसलिए उनको देने के लिए रखी हुई राशि रु.७५,००० उनके नाम पर एक अनाथालय को दान के रूप में दिया गया। मैं अपने शब्दों में बता नहीं सकता कि वह कितना खुश हुआ। आप हमें एक नया रास्ता दिखाया है। ऐसा आप नौकरी करते समय और सेवा निवृत्ति होने के बाद भी हमेशा अपने कार्यों से यही सिखाते आ रहे हैं। वही आपकी महानता है। आपके छात्र-विद्यासागर। उनके महान व्यक्तित्व के लिए मेरे दिल में अपार संतोष हुआ। मैंने लक्ष्मी के हाथ में पत्र रख दिया।

नीति : गुरूजी के द्वारा मिला हुआ उपहार बहुमूल्य होता है।

चित्रकथा

वामन अवतार

तेलुगु में - डॉ.ए.संध्या
हिन्दी में - डॉ.एम.रजनी
चित्र - श्री के.तुलसीप्रसाद

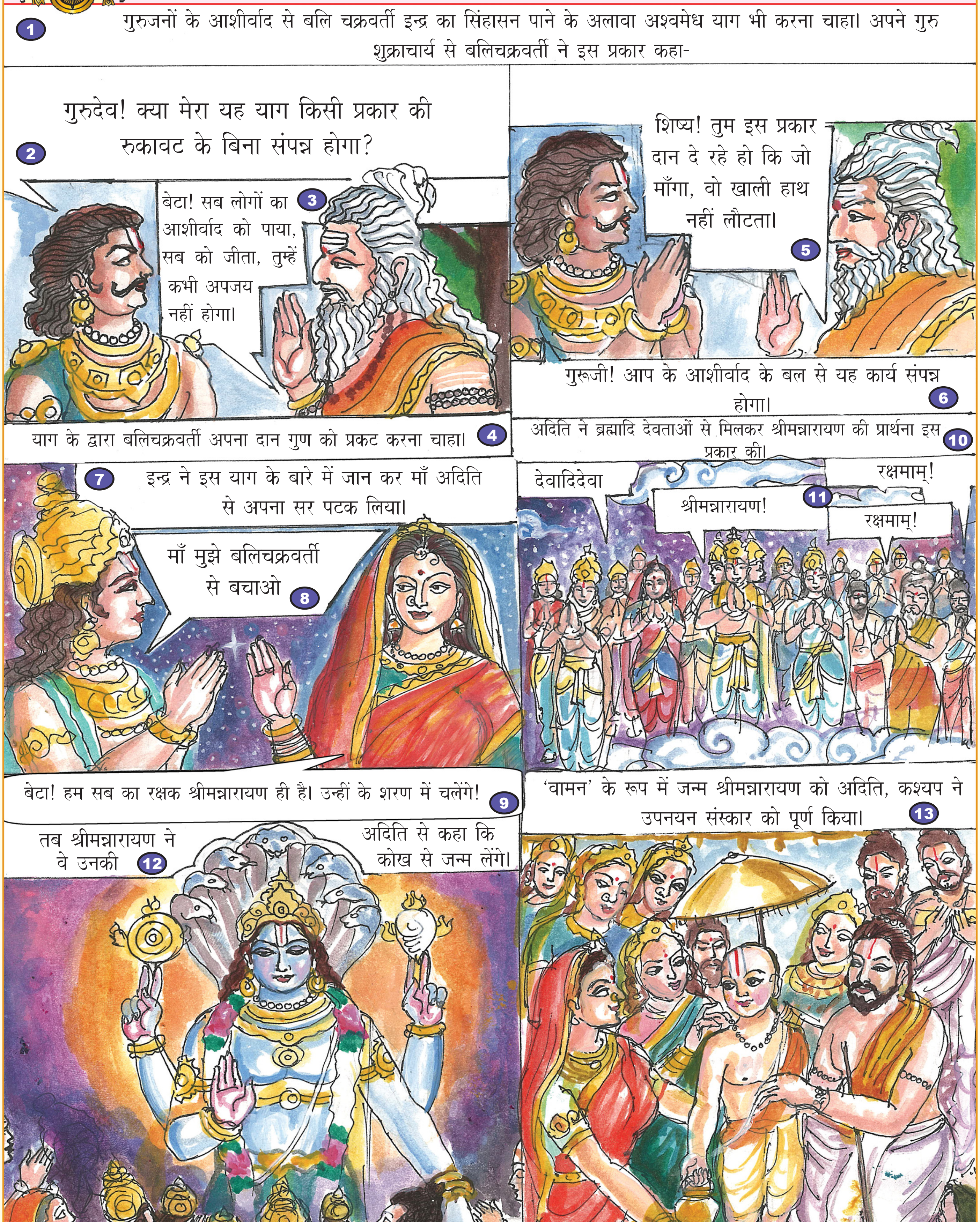

इन्द्र का सिंहासन को हस्तगत करके, याग करते हुए बलिचक्रवर्ती के पास वामन गया। बलिचक्रवर्ती ने वामन को उन्नत आसन पर बिठाया और पूजा किया। 14
15 बालक! तुम्हें क्या चाहिए पूछो! ऐसा कहने पर,
शुक्राचार्य ने कहा। चक्रवर्ती! अब आप के पास जो बालक आया है, वह सामान्य बालक नहीं! सावधान! 16
तब वामन ने कहा चक्रवर्ती मैं ब्रह्मचारी हूँ! मुझे क्या चाहिए! मुझे रहने केलिए सिर्फ तीन कदम भूमि दो। 17
18 चक्रवर्ती ने वैसे ही दूँगा कहकर कमंडल को हाथ में लिया। गुरु शुक्राचार्य ने कमंडल में प्रवेश किया और जल आने के रास्ते को रोक दिया।
फिर भी वामन ने एक कुश से बंद हुए पानी के रास्ते का छेदन किया। 19
ब्रह्मचारी! ग्रहण करो! तीन कदम दान को स्वीकार कीजिए। 20
21 तब वामन ने एक कदम से भूमि, दूसरे कदम से स्वर्ग के ऊपर रखकर,
22 चक्रवर्ती! तीसरा कदम कहाँ रखूँ। ऐसा पूछने पर...
बलिचक्रवर्ती समझ गये कि स्वयं श्रीमन्नारायण ही वामन वेश में पधारे हैं। 23
स्वामी तीसरा कदम मेरे सर पर रखो। 24
25 तब वामन ने अपना तीसरा कदम बलि के सर पर रखकर उन्हें पाताल को भेज दिया। इस प्रकार उनको धन्यजीवि बनाया।
इस विषय को जान कर समस्त विश्व के लोग वामन की तरह-तरह से स्तुती करने लगे। 26
स्वस्ति।

'क्विज'

आयोजक - डॉ.एन.प्रत्यूषा

१) श्रीकृष्ण का जन्म किस स्थान में हुआ?

अ) अस्पताल आ) कारागार इ) घर ई) वन

२) पांडवों को लाक्षागृह में जलाकर मार डालने का षडयंत्र किसने रचा था?

अ) शुभम आ) भरत इ) श्रेयस् ई) भास्कर

३) अज्ञातवास के समय युधिष्ठिर राजा विराट के यहाँ किस वेश में रहे थे?

अ) कंक आ) तंतिपाल इ) सैरंध्री ई) वृकोदर

४) श्रीकृष्ण की जन्म देनेवाली माता का नाम क्या है?

अ) यशोदा आ) जसोदा इ) रोहिणी ई) देवकी

५) कलियुग वेंकटेश पद्मावती से शादी करने केलिए कर्ज किससे लिया?

अ) यक्ष आ) गंधर्व इ) कुबेर ई) ब्रह्म

६) मेघनाद का दूसरा नाम क्या था?

अ) विचित्रवीर्य आ) इन्द्रजीत् इ) कुंभकर्ण ई) दशानन

७) श्रावण पूर्णिमा के दिन किस त्योहार को मनाते हैं?

अ) वरलक्ष्मी व्रत आ) कृष्णाष्टमी इ) राखी ई) नागपंचमी

जवाब

१) आ २) अ ३) अ ४) ई ५) इ ६) आ ७) इ

चित्रलेखन

इस चित्र को रंगों से अब भरें क्या?

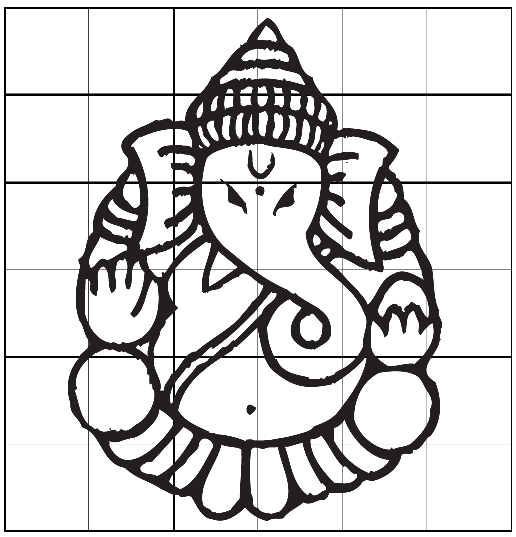

बगल में सूचित चित्र को नीचे के डिब्बों में खींचिये-

Printed by Sri P. Ramaraju, M.A., Special Officer (Press & Publications), T.T.D. Press, Tirupati and Published by Dr.K. Radha Ramana, M.A., M.Phil., Ph.D., on behalf of Tirumala Tirupati Devasthanams and Published at Tiruapti-517 507. Editor : Dr.V.G. Chokkalingam, M.A., Ph.D.

दि. ११-०८-२०२१ को ति.ति.दे. अध्यक्ष पद के कार्यभार को स्वीकारते हुए श्री वाई.वी.सुब्बारेड्डी। इस संदर्भ में अध्यक्षजी को ति.ति.दे. कार्यनिर्वहणाधिकारी डॉ.के.एस.जवरह रेड्डी, आई.ए.एस., ने चित्रपठ को देते हुए दृश्य। इस कार्यक्रम में श्री चेविरेड्डी भास्कर रेड्डी, एम.एल.ए., व तुडा अध्यक्ष, ति.ति.दे. अतिरिक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री ए.वी.धर्मारेड्डी, आई.डी.ई.एस., ति.ति.दे. संयुक्त कार्यनिर्वहणाधिकारिणी श्रीमती सदा भार्गवी, आई.ए.एस., और अन्य उन्नताधिकारिगण ने भाग लिया।

दि. २०-०८-२०२१ को तिरुचानूर, श्री पद्मावती देवीजी के मंदिर में शास्त्रोक्त के रूप में संपन्न वरलक्ष्मी व्रत। तिरुमल के जैसा तिरुचानूर में भी 'तुलाभार सेवा' कार्यक्रम को प्रप्रथम बार प्रारंभित करते हुए दृश्य। इस संदर्भ में धर्मपत्नी सहित ति.ति.दे. अध्यक्ष श्री वाई.वी.सुब्बारेड्डी, ति.ति.दे. कार्यनिर्वहणाधिकारी डॉ.के.एस.जवहर रेड्डी, आई.ए.एस., ति.ति.दे. संयुक्त कार्यनिर्वहणाधिकारिणी श्रीमती सदा भार्गवी, आई.ए.एस., और अन्य उन्नताधिकारिगण ने भाग लिया।

दि. ३०-०८-२०२१ को श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के अवसर पर ति.ति.दे. ने तिरुमल में प्रप्रथम बार 'नवनीत सेवा' कार्यक्रम को प्रारंभित किया है। इस संदर्भ में मक्खन के साथ छिड़के करते हुए ति.ति.दे. अध्यक्ष श्री वाई.वी.सुब्बारेड्डी। इस अवसर पर ति.ति.दे. अध्यक्ष, ति.ति.दे. कार्यनिर्वहणाधिकारी के द्वारा मक्खन के बर्तन को गोशाला से ले जाया गया है। इस कार्यक्रम में ति.ति.दे. अतिरिक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री ए.वी.धर्मारेड्डी, आई.डी.ई.एस., और अन्य उन्नताधिकारिगण ने भाग लिया है।

SAPTHAGIRI (HINDI) ILLUSTRATED MONTHLY Published by Tirumala Tirupati Devasthnams
Printing on 25-08-2021 & Posting at Tirupati RMS Regd. with the Registrar of Newspapers for India under RNI No.10742/1957. Postal Regd.No.TRP/152/2021-2023
"LICENCED TO POST WITHOUT PREPAYMENT No.PMGK/RNP/WPP-04(2)/2021-2023"
Posting on 5th of every month.